हिन्दी साहित्य का
संक्षिप्त परिचय
(2)

रसँ संग्रामसिंह
यासिंह
प्रताप

बंधु-मिलन

महाराणा प्रताप और उनके
अनुज शक्तिसिंह की जीवन-
घटना पर आधारित
ऐतिहासिक नाटक

लेखक
श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी'
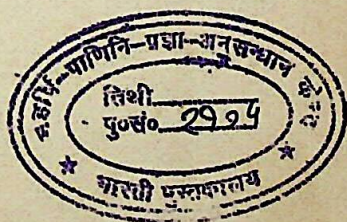
प्रकाशक
आधुनिक प्रकाशन, गृह
अलोपीबाग, इलाहाबाद

प्रकाशक

आधुनिक प्रकाशन गृह,

अलोपीबाग, इलाहाबाद-६

चतुर्थ संस्करण

१९७८

मूल्य :

तीन रुपये

मुद्रक

सरयू प्रसाद पाण्डेय

नागरी प्रेस,

अलोपीबाग, इलाहाबाद-६

पात्र-परिचय

महाराणा प्रताप : मेवाड़ के इतिहास-प्रसिद्ध महाराणा

शक्तिसिंह : प्रताप का छोटा भाई

जगमल : प्रताप का छोटा भाई

इंदु : शक्तिसिंह की पत्नी

भामाशाह : मेवाड़ का दीवान

भीलराज : मेवाड़ के भीलों का मुखिया

मानसिंह : अंबर के महाराजा

अभयदान : मेवाड़-निवासी चारण

गौण पात्र

परिचारिका

दो मुग़ल सैनिक

———
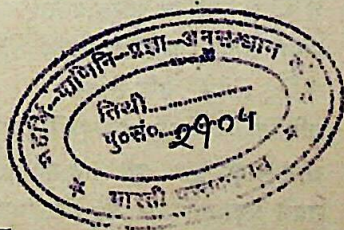
प्रवेश

महाराणा प्रताप के अप्रतिम वीर चरित्र पर अनेक और बहुत ओजस्वी नाटक लिखे गये हैं जिनमें विशेष उल्लेखनीय श्री द्विजेन्द्रलाल राय का 'महाराणा प्रताप', श्री जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद' का 'प्रताप प्रतिज्ञा' और श्री देवराज 'दिनेश' का 'मानव प्रताप' हैं फिर भी मैंने इस विषय पर नाटक लिखने की धृष्टता की है इस बात पर मेरे प्रेमी पाठकों को आश्चर्य होना स्वाभाविक है लेकिन मैं अपनी धृष्टता पर लज्जित नहीं हूँ। मैंने अपने दृष्टिकोण से महाराणा प्रताप के जीवन के एक अंश को ही छुआ है।

ऐतिहासिक नाटकों में सिद्धहस्त नाटककारों ने वीर पुरुषों के संपूर्ण जीवन को नाटक का विषय बनाने की भूल की है—मैंने भी एक-दो नाटकों में की है—लेकिन वास्तविकता यह है कि किसी ऐतिहासिक पुरुष का संपूर्ण जीवन नाटक का विषय नहीं बन सकता, और न बनाया जाना चाहिए। मैंने 'बन्धु-मिलन', में महाराणा प्रताप और उनके अनुज शक्तिसिंह के संघर्ष और पुर्नमिलन मात्र को नाटक का विषय बनाया है और नाटक द्वारा इस बात का संकेत दिया है कि बंधु-विग्रह भारत का सबसे बड़ा अभिशाप है और 'बन्धु-मिलन' ही सबसे बड़ा वरदान बन सकता है। मुझे प्रसन्नता है कि मैंने समय की एक माँग की पूर्ति की है।

नाटक रंगमंच के अनुकूल हो इसका मैंने पूरा ध्यान रखा है।

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

पहला अंक

पहला दृश्य
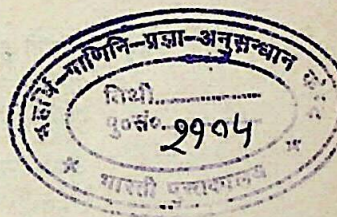
(स्थान—शक्तिसिंह के रावला के अंतःपुर का एक कक्ष। समय—दिन। कक्ष में एक चाँदनी बिछी हुई है जिस पर पिछली दीवार से सटा कर एक कालीन बिछाई गई है। कालीन पर दाईं ओर बाईं तरफ़ आमने-सामने दो मसनद रखे हुए हैं। बाईं दीवार से सट कर एक पलंग बिछा हुआ है। दाईं तरफ एक कोने में ढाल, तलवार और भाले आदि कुछ शस्त्र रखे हुए हैं। कालीन पर मसनदों के सहारे शक्तिसिंह और उसकी पत्नी इंदु बैठे हुए शतरंज खेल रहे हैं। शक्तिसिंह के पास एक पात्र में कुसुंबा रखा है। खेलते हुए कभी-कभी शक्तिसिंह कुसुंबा का घूंट भरता जाता है।)

इंदु : (किंचित हँसते हुए) आप युद्ध-क्षेत्र में शत्रु से भले ही विजय प्रोप्त कर लें किन्तु शतरंज में मुझसे जीतना लोहे के चने चबाना है। (चाल चलते हुए) लो बचाओ अपना वज़ीर।

शक्तिसिंह : (शतरंज के मोहरों को ध्यानपूर्वक देखता हुआ) मानता हूँ, इंदु, तुमने ऐसा घेरा डाला है कि मेरे वज़ीर को कहीं भागने के लिए भी मार्ग नहीं छोड़ा लेकिन मेरा वज़ीर राजपूत है। रणभूमि में पीठ दिखाने की अपेक्षा वह प्राणों की बलि देना श्रेयस्कर समझता है।

इंदु : (हँसती हुई) यह भी कोई वीरता है। यह तो फिसल पड़े की हर गंगा हुई। कोई खेल हो अथवा संग्राम अंधों की भाँति बिना आगे-पीछे देखे बढ़ते जाना—अपने मस्तक का ध्यान न रख कर केवल शत्रु के मस्तक पर आँखें गड़ाए रखना आत्म-घातक नीति है।

शक्तिसिंह : इस आत्म-घातक रणनीति के कारण राजपूत जाति शताब्दियों से अपने अस्तित्व को गौरव के साथ बनाए हुए है। सहस्रों राजपूतों के मस्तक रण-भूमि में कटते आए हैं, सहस्रों राजपूत वीरांगनाएँ जौहर की आकाश-चुंबी जाज्वल्यमान लपटों में भस्म होती आई हैं किंतु आज तक राजपूती को आँच नहीं आई है। राजपूत वीर-गति पाकर अपनी आगामी पीढ़ी को नवजीवन प्रदान करता है। हम रणभूमि में प्राण देने को मरना नहीं वीर-गति पाना कहते हैं। आत्माहुति प्रदान करना आत्म-समर्पण करने की अपेक्षा वीरता का कार्य है। राजपूतों का यही मत है।

इंदु : अच्छा जी, तो आपके वज़ीर जी भी वीर-गति पानेवाले हैं। बचा सको तो बचाओ।

शक्तिसिंह : तुम समझती हो कि युद्ध किसी एक व्यक्ति पर निर्भर है।

इंदु : होना तो नहीं चाहिए लेकिन हमारे भारत में ऐसा ही होता आया है। जैसे वज़ीर के समाप्त होने पर शतरंज की बाजी प्राणहीन सी हो जाती है उसी प्रकार हमारी सेनाएँ राजा या सेनापति के वीर गति पाने

पर हतोत्साह हो जाती हैं। भारत की स्वाधीनता की विदेशियों से रक्षा करने के लिए वीर-शिरोमणि नरशार्दूल महाराणा संग्रामसिंह भारत के कितने ही हिंदू और मुसलमान शासकों का सहयोग लेकर शत्रु से लोहा लेने गए थे। हमारे वीर योद्धा शत्रु के छक्के छुड़ा रहे थे लेकिन जब महाराणा, जो वीरता के आवेश में हरावल में रह कर सेना का संचालन कर रहे थे, घायल होकर गिर पड़े और मूर्छित हो गए और उनका एक अनुचर उनके प्राणों की रक्षा करने के उद्देश्य से उन्हें उठाकर युद्धभूमि से दूर ले गया तब क्या हुआ यह तुम जानते ही हो। महाराणा की अनुपस्थिति ने हमारी सेना के हाथ-पाँवों को गति-हीन कर दिया। हम युद्ध तो करते हैं लेकिन यह नहीं जानते कि किस उद्देश्य से कर रहे हैं।

शक्तिसिंह : क्या कोई कार्य निरुद्देश्य किया जाता है?

इंदु : कभी-कभी हम वास्तविक उद्देश्य को न जानते हुए गौण उद्देश्य के लिए संग्राम करते हैं। हमारे योद्धा समझते हैं कि हम राजा के लिए लड़ रहे हैं न कि अपने देश के लिए तथा स्वयं अपने लिए, अपनी पीढ़ियों के लिए। और हम अनेक कार्य स्वभाववश करते जाते हैं सर्वथा निरुद्देश्य ही जैसे आप कुसुंबा पी रहे हैं। यह बैरिन अफ़ीम, भला बताओ इसके पीने से क्या मिलता है राजपूतों को? राजपूत भरपूर अफ़ीम पी-पी कर युद्ध करने जाते हैं और नशे में भूल जाते हैं कि किस उद्देश्य से तलवार चला रहे हैं।

शक्तिसिंह : तुम राजपूतनी होकर भी राजपूतों की निंदा कर रही हो ?

इंदु : निंदा व्यक्ति का सबसे विश्वस्त मित्र है । दर्पण दिखाना कोई अहितकर कार्य नहीं है। महाराणा संग्रामसिंह जी हमारी सेना को युद्ध-भूमि में दिखाई नहीं दे रहे थे इसलिए क्या हमारे योद्धाओं को साहस छोड़ देना चाहिए था ? इसीलिए तो मैं कहती हूँ कि हम बिना यह जाने कि हम किस उद्देश्य से संग्राम कर रहे हैं जूझते रहते हैं। क्या महाराणा संग्रामसिंह के लिए वह युद्ध हो रहा था ? वह युद्ध तो हो रहा था भारत की स्वाधीनता की रक्षा के लिए। महाराणाजी वीर-गति पा जाते, तब भी क्या युद्ध समाप्त हो जाना चाहिए था ? युद्ध तो जारी रहना चाहिए था तब तक जब तक एक भी विदेशी भारत में अपना साम्राज्य स्थापित करने की अभिलाषा प्राणों में पाले हुए भारत की धरती पर बना होता।

शक्तिसिंह : अच्छा रानी, तुम्हारे कहने से मैं आज से कुसुंबा को लात मारता हूँ। इस काली नागिन अफ़ीम को अपने जीवन के पास नहीं फटकने दूँगा।

(शक्तिसिंह कुसुंबा के पात्र को दूर फेंक देता है।)

शक्तिसिंह : किंतु, रानी, राजपूत केवल व्यक्ति के सम्मान के लिए सदैव लड़ा है इस बात को मैं नहीं मानता। हम संग्राम करते हैं अपनी परंपराओं के लिए, जाति-गौरव के लिए, देश के सम्मान के लिए । क्या

महाराणा संग्रामसिंह ने स्वहित के लिए बाबर से संग्राम किया था ?

इंदु : नहीं, उनका दृष्टिकोण व्यापक था यह मैं मानती हूँ। यदि उन्हें स्वहित ही अभीष्ट होता तो 'बैठे-ठाले आ बैल मुझे मार' कहावत को वह क्यों चरितार्थ करते ? बाबर उनसे युद्ध करना नहीं चाहता था अपितु भारत के यमुना के दक्षिण के भाग को महाराणा के प्रभाव-क्षेत्र में रहने देने में ही वह अपना क्षेम मानता था। फिर भी उन्होंने स्वयं आगे बढ़कर बाबर से संग्राम छेड़ा क्योंकि कोई आकर हमारे देश पर राज्य करे यह हमारे देश के स्वाभिमान को चुनौती है। एक राजपूत के नाते ही नहीं, मेवाड़ के महाराणा के नाते भी नहीं, अपितु एक भारतीय के नाते उन्होंने विदेशी आक्रमणकारी से लोहा लेने का निश्चय किया था।

शक्तिसिंह : तब मैं जीता और तुम हारी क्योंकि तुमने मान लिया कि राजपूत केवल अपने लिए संग्राम नहीं करता।

इंदु : मैं अब भी अपनी बात पर दृढ़ हूँ। सारे राजपूत महाराणा संग्रामसिंह नहीं हैं, होते तो ग्वालियर के तोमर राजा ने बाबर का साथ देकर विदेशी के हाथ मजबूत क्यों किये होते ? एक मेवाड़ी सामंत ने कभी उनका अपमान कर दिया था इसी बात का प्रतिशोध लेने के हित उसने मेवाड़ को नीचा दिखाने के लिए देश के शत्रु का साथ दिया। यह तो पराए अपशकुन के लिए अपनी नाक कटाना

हुआ। स्वयं तो पराधीनता के पाश में बद्ध हुए, साथ ही अपने देश में विदेशी शासन को दृढ़ किया।

शक्तिसिंह : किन्तु राजपूत का रक्त गरम होता है। वह सब कुछ सह सकता है लेकिन अपमान नहीं। अपमान उसके तन-मन में ज्वाला भड़का देता है। वह संपूर्ण संसार को उस ज्वाला में भस्म करने को प्रस्तुत हो जाता है। फिर उसे विवेक-अविवेक, उचित-अनुचित का ध्यान नहीं रहता। कोई मेरा अपमान करे तो मैं भी वही करूँ जो ग्वालियर के राजा ने किया। भले ही इतिहास मेरे नाम पर थूके।

इंदु : तब तुम हारे और मैं जीती। राजपूत की वीरता प्रायः पथ-भ्रष्ट होती रहती है। राजपूत की वीरता अंधी है, वह आवेश में आकर स्वयं अपना मस्तक काटती है।

शक्तिसिंह : कोई अपना भी मस्तक काटता है ?

इंदु : अपने भाई का मस्तक काटना अपना ही मस्तक काटने के समान है। हम भूल जाते हैं कि हमारे प्रत्येक देशवासी का मस्तक हमारा ही मस्तक है। किसी देशवासी का मस्तक कटता है तो हमें समझना चाहिए कि हमारा ही मस्तक कटा। लेकिन छोड़ो इन बातों को। हम बातों में उलझ गए और शतरंज की बाजी को भूल गए। बचाओ अपने वज़ीर को।

(शक्तिसिंह शतरंज की बिसात को उलट देता है।)

शक्तिसिंह : गोली मारो शतरंज को। इन हाथी दांत के राजा, वज़ीर, हाथी, ऊँट, घोड़ों और पैदलों की नकली

लड़ाई में मेरा मन नहीं लगता। मेरी भुजाएँ फड़कती रहती हैं रणभूमि में तलवार चलाने के लिए। मेरी तलवार खून की प्यासी रहती है।

इंदु : तभी आपको आखेट करने का नशा सा छाया रहता है।

शक्तिसिंह : आखेट भी मुझे सिंह का ही भाता है। मैं ऐसे काम करना चाहता हूँ जिनमें प्राणों की बाजी लगानी पड़े। अपने से दुर्बल पर हाथ उठाने में मुझे शर्म आती है लेकिन अपने से बलवान से दो हाथ करने में मुझे आनंद आता है।

(राजसी वेशभूषा में जगमल प्रवेश करता है। शक्तिसिंह और इंदु खड़े हो जाते हैं।)

इंदु : महाराणाजी, इस समय आप यहाँ ?

शक्तिसिंह : इस समय तो आपको राज-सभागृह में होना था।

इंदु : यह तो राज्याभिषेक का समय है।

जगमल : अभिषेक हो रहा है।

शक्तिसिंह : किसका ?

जगमल : यह बाद में बताऊँगा, पहले आप बताओ कि आप सभागृह में क्यों उपस्थित नहीं हुए ?

शक्तिसिंह : इसलिए कि पिताजी ने अपनी अंतिम घड़ियों में तुमको अपना उत्तराधिकारी बनाया था। अभिषेक के समय सभागृह में उपस्थित सभी व्यक्तियों को नतमस्तक होकर महाराणा का अभिनंदन करना

पड़ता और उसका आज्ञाकारी रहने की शपथ लेनी पड़ती है।

जगमल : और मेरे आगे मस्तक झुकाकर अभिवादन करना आपको स्वीकार नहीं था, किन्तु यह बताओ कि मैंने आपका क्या बिगाड़ा है ?

शक्तिसिंह : बिगाड़ा यही है कि मेरे पिता जो तुम्हारे भी पिता थे स्वर्गीय महाराणा उदयसिंह, भगवान् उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे, मुझे इतना नहीं चाहते थे जितना तुमको ! असल बात यह है कि उनको तुम्हारी माँ अधिक प्रिय थी और मेरी माँ कम।

जगमल : तो इसमें मेरा क्या अपराध ? मैं तो आपको प्यार करना चाहता हूँ। सब भाइयों को प्यार करना चाहता हूँ, मैंने पिताजी से कब कहा था कि वह मुझे अपना उत्तराधिकारी बनावें ?

इंदु : किन्तु आपकी माताजी ने तो कहा था।

जगमल : मैंने तो माँ से ऐसा करने को नहीं कहा। दशरथ ने राम को वनवास की आज्ञा दी इसमें क्या भरत का अपराध था।

शक्तिसिंह : किन्तु तुम माँ के षड्यंत्र में सम्मिलित तो हुए।

जगमल : मैं क्या कर सकता था ?

शक्तिसिंह : माँ का विरोध कर सकते थे। लेकिन क्यों करते ? राजमुकुट का मोह किसे नहीं होता ? महाराणा बनने पर तुम अपने पच्चीसों भाइयों पर आज्ञा चलाने का अधिकार पाते। लेकिन छोड़ो इन बातों

को। यह बताओ, अब किसको सिंहासन पर बैठाया जा रहा है ?

जगमल : प्रतापसिंह जी को ?

इंदु : अचानक यह निर्णय किसने ले लिया ?

जगमल : सामंतों ने विशेष रूप से सोनगढ़े के झालौरराव और चंदावत कृष्णजी ने।

इंदु : इसका अर्थ यह है कि यह झगड़ा भाइयों का नहीं उनकी माताओं का है। झालौरराव प्रतापसिंह जी के मामा हैं और निश्चित रूप से उन्होंने अपनी बहन के आदेश से स्वर्गीय महाराणाजी की आज्ञा का विरोध किया है।

शक्तिसिंह : यदि आज मेरी माँ जीवित होतीं तो वह भी मेरे लिए भी प्रयत्न करतीं। तब सामंतों में दो दल नहीं तीन दल होते।

जगमल : किंतु अब सामंतों में दो दल नहीं हैं।

इंदु : यह कैसे संभव हो सकता है ? आपका राजतिलक करने की सारी तैयारी हो चुकी थी। आपको राजसी वेश में सज्जित भी कर दिया गया था।

जगमल : और मुझे राजसिंहासन पर आसीन भी कर दिया था। तभी सामंत झालौरराव ने हाथ पकड़ कर मुझे सिंहासन के उतार लिया। सामंत चंदावत कृष्ण जी ने कहा—'क्षमा करें राजकुमार जगमल जी, हमें विवश होकर स्वर्गीय महाराणा उदयसिंह जी के अन्यायपूर्ण निर्णय का विरोध करना पड़ रहा है।

स्वर्गीय महाराणा ने जिस निष्क्रियता का प्रारंभ किया था वह आगे भी बनी रहे और मेवाड़ अपमान के कड़वे घूँट पीता रहे यह मेवाड़ के सामंतों को स्वीकार नहीं है। मेवाड़ का राजमुकुट काँटों का ताज है इसे वही धारण कर सकता है जो विदेशी शत्रुओं से लोहा लेने में देश का नेतृत्व कर सके।" इसके पश्चात् सामंत झालोरराव ने कहा—"और इस देश के कठिन समय में, भयानक तूफान में अपने बल, पराक्रम, साहस और सूझबूझ से मेवाड़ की रक्षा करने की क्षमता स्वर्गीय महाराणा के राजकुमारों में केवल प्रतापसिंह जी में है। इसलिए हमने निश्चय किया है कि आज उनको ही राजसिंहासन पर आसीन किया जावे।"

इंदु : और सब सामंतों ने उनका समर्थन किया।

जगमल : नहीं मेरी माताजी के समर्थकों का भी सभा-भवन में अभाव नहीं था। उनके सामंतों ने तलवारें खींच लीं, दूसरे पक्ष के हाथ भी तलवार की मूँठों पर पड़े और यदि मैंने स्थिति को सम्हाला न होता तो सभा-भवन में रक्त की धाराएँ बह पड़तीं।

इंदु : आपने क्या किया ?

जगमल : वही जो मेरी आत्मा ने कहा। मैंने सामंतों से कहा—"शांत, मैं मेवाड़ के वीर सामंतों के मस्तकों पर पाँव रखता हुआ राजसिंहासन पर आसीन नहीं होना चाहता। स्वर्गीय दाजीराज[1] की चाहे कुछ भी

---

१. राजस्थान के राजघरानों में पिता को दाजीराज कहा जाता है।

इच्छा रही हो और मेरी माताजी चाहे कुछ भी चाहती हों लेकिन मैं गृहकलह का कारण नहीं बनना चाहता। इसमें संदेह नहीं कि दादाभाई प्रतापसिंह जी मुझसे श्रेष्ठ भी हैं और ज्येष्ठ भी। इनकी छत्र-छाया में मेवाड़ अपने गत गौरव को प्राप्त कर सकेगा, इसका मुझे विश्वास है अतः मैं मेवाड़ के राजमुकुट के लिए संघर्ष नहीं करना चाहता।"

शक्तिसिंह : हूँ, तुम कायर हो, जगमल। कोई ज्येष्ठ होने से श्रेष्ठ नहीं हो जाता है। तुम यदि राजसिंहासन पर आसीन होते तो मैं इस कड़ुवे घूँट को पी जाता क्योंकि पिता जी की आज्ञा के विरुद्ध मैं नहीं जाता, किंतु सामन्तों ने योग्यता के प्रश्न को उठाया है तो इस बात का निर्णय होना चाहिए कि प्रतापसिंह और शक्तिसिंह दोनों में से किसकी भुजाओं में अधिक बल है। भुज-बल ही राजपूत की श्रेष्ठता की कसौटी है। मैं दादा-भाई प्रताप को द्वन्द्व-युद्ध के लिए ललकारूंगा।

(शक्तिसिंह तेजी के साथ बढ़कर कक्ष में रखी हुई ढाल और तलवार उठाता है और प्रस्थान करता है।)

इंदु : (शक्तिसिंह के पीछे जाती हुई) सुनिए तो, प्राणनाथ! यह आप क्या कर रहे हैं ?

(इंदु भी प्रस्थान करती है। इसी समय दूसरी ओर से महाराणा प्रताप प्रवेश करता है।)

प्रताप : भाई, जंगमल ! शक्तिसिंह नहीं हैं यहाँ ?

जगमल : वह क्रोधित होकर आपकी ही तलाश में गए हैं। संभवतः राजसभा में पहुँच कर तूफ़ान खड़ा करेंगे।

अच्छा ही हुआ कि आप इस समय वहाँ नहीं हैं। मुझे आश्चर्य इस बात का है कि अभिषेक का कार्य इतनी जल्दी समाप्त हो गया।

प्रताप : मैंने सारी परंपरागत किंतु अनावश्यक रूढ़ियों को नहीं होने दिया। इस समय मेवाड़ में संकट-काल है। विदेशियों ने मेवाड़ की अधिकांश भूमि पर अधिकार कर रखा है। हमारी जन्मभूमि पराधीनता-पाश में बँधी हुई है और राज्याभिषेक के नाम पर हम उत्सव मनावें, यह शोभा नहीं देता।

जगमल : तो सच बताओ, दादाभाई, मेवाड़ की राजगद्दी पर आसीन होकर आपको प्रसन्नता प्राप्त नहीं हुई?

प्रताप : राजगद्दी पर आसीन होना, मस्तक पर राजमुकुट धारण करना, बहुमूल्य वस्त्रालंकारों से शरीर को सुसज्जित करना, राज-महलों में रहना, भोग-विलास की विविध सामग्री उपलब्ध करना, क्या यही मनुष्य-जीवन की सार्थकता है। प्रताप वैभव और विलास का भूखा नहीं है। वह अभावों का जीवन व्यतीत कर सुखी और प्रसन्न रह सकता है।

जगमल : तब आपने मेरे मस्तक का राजमुकुट अपने मस्तक पर क्यों रख लिया?

प्रताप : मैंने कभी नहीं चाहा कि मुझे स्वर्गीय पिताजी की अंतिम इच्छा के विरुद्ध महाराणा-पद का सम्मान प्रदान किया जावे किन्तु भैया राजा से भी ऊँचा स्थान प्रजा का है। बाप्पा रावल के वंश में

राजतिलक भीलराज अपने अँगूठे के रक्त से करते हैं, यह इसी बात का प्रमाण है कि प्रजा को ही किसी को राजा बनाने का अधिकार है। मैंने तो प्रजा की इच्छा के आगे अपना मस्तक झुका दिया है। प्रजा के निर्णय को स्वीकार किया है।

जगमल : किन्तु आपने स्वर्गीय पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन किया है। हम सूर्यवंशी हैं—भगवान् राम के वंशज, जिन्होंने पिता की आज्ञा का पालन करने में संपूर्ण प्रजा के अनुरोध को ठुकरा कर चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार किया था।

प्रताप : तुम ठीक कहते हो जगमल ! मुझे सूर्यवंश की परंपरा का पालन करना चाहिए था किन्तु इस समय प्रश्न है अपने देश का। राम जैसे पुत्र के लिए दशरथ जैसा पिता भी तो मिलना चाहिए। क्या कभी दशरथ देश-द्रोह कर सकते थे। देश में विदेशी अपना शासन जमाए बैठे रहें और हम शांत रहें, निष्क्रिय रहें, भोग-विलास में रत रहें, यह देश-द्रोह नहीं तो क्या है ? दशरथ देश-द्रोही नहीं थे, न वह राम को देश-द्रोह करने की आज्ञा दे सकते थे।

जगमल : किन्तु पिताजी ने क्या अपने पुत्रों में से किसी को देश-द्रोह करने की आज्ञा प्रदान की थी ?

प्रताप : उन्होंने स्वयं देश-द्रोह किया था जगमल !

जगमल : क्या छोटे पुत्र को उत्तराधिकारी घोषित करना देश-द्रोह है ? तब तो दशरथ भी देश-द्रोही थे।

प्रताप : छोटे पुत्र को तो क्या, वह किसी दासी-पुत्र को भी अपना उत्तराधिकारी घोषित कर देते तो इसमें न

तो देश-द्रोह होता न मानवता के प्रति अपराध। फिर भी यह बात तो स्पष्ट है कि उन्होंने अपने देश के प्रति कर्तव्य का पालन नहीं किया। उनके पिता अर्थात् हमारे पितामह ने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक विदेशी आक्रमणकारियों को भारत भूमि से निष्कासित नहीं कर दूँगा तब तक मेवाड़-भूमि में पाँव नहीं रखूँगा। वह युद्ध में पराजित होकर साहस छोड़कर नहीं बैठ गए थे। उनके शरीर पर युद्धों में अस्सी घाव हुए थे, एक आँख भी उनकी जाती रही थी, एक पाँव भी वेकार हो गया था किन्तु फिर भी उनके पुरुषार्थ में रत्ती भर भी कमी नहीं आई थी। वह फिर भी बाबर से संग्राम करने को आतुर थे किन्तु दुर्भाग्य हमारे देश का कि उन्हें एक देश-द्रोही ने ज़हर देकर मार डाला।

जगमल : पितामह की वीरता अप्रतिम थी, इसमें किसे संदेह है ?

प्रताप : किन्तु उनके पुत्रों को भी तो उनके अनुरूप होना चाहिए था। महाराणा संग्रामसिंहजी के पुत्रों में केवल भोजराज ऐसे थे जो अपने पिता का, अपने वंश का, नाम उज्ज्वल करते किंतु वह तो क्षात्रधर्म का पालन करते हुए, बाबर से संग्राम करते हुए वीर-गति पा गए। उनसे छोटे विक्रमादित्य सिंहासन पर आसीन हुए तो भूल गए अपने पिता के संकल्प को। पहलवानों की कुश्तियाँ देखते रहने में ही उन्होंने अपने पराक्रम की इतिश्री समझ ली।

जगमल : और उसके बाद हमारे वंश में अंधकार का युग आया, क्योंकि सामंतों ने दासीपुत्र रणवीर को बाप्पा रावल की पवित्र गद्दी पर आसीन किया।

प्रताप : दासी-पुत्र का राजसिंहासन पर आसीन होना बुरी बात नहीं थी, किंतु मस्तक पर राजमुकुट धारण कर मनुष्यता को भूल जाना घोर अपराध था रणवीरजी का। उन्होंने हमारे पिताजी का वध करने का प्रयास किया ताकि वह निष्कंटक मेवाड़ के महाराणा बने रहें। राजमुकुट का मोह, प्रभुता की भूख मनुष्य को राक्षस बना देती है। किंतु, जाने दो उस बात को। मैं तो तुमसे कह रहा था कि हमारे पिता जी ने भी अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया।

जगमल : उन्होंने आपको उत्तराधिकारी नहीं बनाया इसलिए आप उन्हें लांछित करते हैं, वह भी तब जब वह इस संसार में नहीं हैं।

प्रताप : मैं उन्हें लांछित नहीं कर रहा जगमल, केवल अपने प्राणों की व्यथा प्रकट कर रहा हूँ। वह सिंहासन पर बैठे तो भूल गए उस महान् प्रतिज्ञा को, जो उनके पिता ने की थी। वह क्षत्रिय-धर्म को भूल गए और वेश्याओं के नृत्य-गान में मस्त रहकर जीवन-व्यतीत करने लगे। राजा को निकम्मा देख-कर ही तो शत्रु को उसके देश पर आक्रमण करने का साहस होता है। अकबर ने चित्तौड़ दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। महाराणाजी शत्रु से लोहा लेने के बजाय दुर्ग में से चले गए। फिर भी मेवाड़

के वीर योद्धाओं ने जगमल और पत्ता जैसे पराक्रमी सेनानियों के नेतृत्व में शत्रु के दाँत खट्टे किए। मेवाड़ी वीरों ने जीते जी शत्रु को दुर्ग में प्रवेश नहीं करने दिया, हमारी राजपूत वीरांगनाओं ने सहस्रों की संख्या में जौहर की ज्वाला में प्रवेश कर राजपूती का नाम अमर कर दिया किंतु हमारे पिताजी फिर भी जीवन भर सुख की नींद सोते रहे। उन्होंने अकबर से प्रतिशोध लेने के लिए क्या किया ?

जगमल : वह कर ही क्या सकते थे ? इतना क्या कम है कि उन्होंने राजस्थान के अन्य राजाओं की भाँति अकबर के राजदरबार में जाकर अपना मस्तक नहीं झुकाया।

प्रताप : नहीं झुकाया, इस सीमा तक मैं उनकी प्रशंसा करता हूँ लेकिन इतना ही तो उनका कर्तव्य नहीं था। देश पर विदेशी का अधिकार हो जावे और देश-वासी प्रतिरोध भी न करें, यह उनकी कायरता को ही सिद्ध करता है।

जगमल : किंतु अकबर चित्तौड़ लेकर शांत बैठ गया तो उससे युद्ध छेड़ कर अपने देश-वासियों को व्यर्थ ही विपत्ति में डालना क्या उचित था, दादाभाई, बल्कि कहना चाहिए, महाराणाजी !

प्रताप : देश को पराधीन रहने देने की अपेक्षा उसे बर्बाद कर देना ही श्रेयस्कर है जगमल ! पराधीन रहकर अपने प्राणों की रक्षा करने की अपेक्षा हमारी स्वाधीनता का अपहरण करने वाले से जूझते हुए प्राणों की बलि चढ़ाना श्रेष्ठ है। राजपूत होकर जो प्राणों का मोह

करता है उसको धिक्कार है। हमें एक न एक दिन मरना ही है तब घर पर पलंग पर साँसें तोड़कर निर्लज्ज मृत्यु पाने की अपेक्षा रणभूमि में मस्तक कटा कर गौरव की मृत्यु क्यों न मरें। तुम जानते हो कि अकबर से लोहा लेने के लिए मेरे प्राण वर्षों से छटपटा रहे हैं। इस संबंध में पिताजी से भी अनेक बार मेरी कहा-सुनी हो चुकी है। मेरी धृष्टता से वह मुझसे अप्रसन्न रहते थे। मेवाड़ के सामंत मेरे प्राणों की इस छटपटाहट से परिचित हैं इसलिए उन्होंने मेरे मस्तक पर राजमुकुट रखा है। तुम इस स्वाधीनता के, देश के सम्मान की रक्षा के युद्ध में मेवाड़ का नेतृत्व करना चाहो तो अब भी मैं राजमुकुट तुम्हारे मस्तक पर रखने को तैयार हूँ।

(प्रताप अपने मस्तक से राजमुकुट उतारने लगता है लेकिन जगमल उसका हाथ पकड़ लेता है।)

जगमल : नहीं, दादाभाई ! अपने मन की बात तो मैं राज-सभा में ही कह चुका हूँ। यह सही है कि पिताजी के प्यार ने मुझे आलसी और आरामतलब बना दिया है। लेकिन फिर भी मैं बाप्पा रावल का वंशज हूँ। मेरी नसों में भी वही रक्त बहता है जो आपकी नसों में। तब आपने जो महान संकल्प किया है उसमें मैं बाधक क्यों बनूँ ?

प्रताप : राजमुकुट अपने मस्तक पर रखकर तुम बाधक कैसे बनोगे ?

जगमल : आपको मेवाड़ की प्रजा का विश्वास प्राप्त है। मैं जानता हूँ कि जब मैं महल में भोग-विलास का

जीवन व्यतीत करता था तब आप मेवाड़ के गाँव-गाँव में घूम कर, कुटी-कुटी के दुःख-दर्द में भाग लेते रहे हो, साथ ही उन्हें देश की स्वाधीनता के संग्राम में भाग लेने के लिए उत्साहित करते रहे हो। आपकी छत्र-छाया में मेवाड़ की प्रजा जिस उत्साह से शत्रु से संग्राम करेगी उतने उत्साह से मेरे आधीन नहीं। मुझे यह राजमुकुट नहीं चाहिए, मुझे तो आप अपने पैरों की धूल दो।

(जगमल प्रताप के चरण छूता है। प्रताप उसे गले लगा लेता है। इसी समय शक्तिसिंह और इंदु प्रवेश करते हैं।)

शक्तिसिंह : (व्यंग करता हुआ) आहा, कितने स्नेह से बंधु-मिलन हो रहा है। कपट-भरे प्यार से किसी के हृदय का घाव नहीं भरता, दादाभाई !

(जगमल और प्रताप गले मिलना छोड़कर शक्तिसिंह और इंदु की तरफ देखते हैं।)

प्रताप : भैया, शक्तिसिंह !

शक्तिसिंह : मुझे भैया मत कहो, प्रताप !

जगमल : दादाभाई शक्तिसिंहजी, बड़े भाई और मेवाड़ के महाराणा को उनके पद-मर्यादा के अनुकूल संबोधन करना चाहिए।

शक्तिसिंह : प्रताप होगा महाराणा तुम्हारे लिए।

इंदु : नहीं, प्रजा ने एकमत होकर उन्हें मेवाड़ का महाराणा बनाया है। अब मेवाड़ के प्रत्येक निवासी का कर्तव्य है कि उनका अनुशासनबद्ध अनुचर बन कर रहे।

शक्तिसिंह : तो इंदु, तुम भी मुझे प्रताप का अनुचर बन कर रहने को कहती हो, किंतु शक्तिसिंह सामंतों के अन्यायपूर्ण निर्णय को मानने को तैयार नहीं। इन्होंने पिताजी की आज्ञा को ठुकरा कर बेचारे जगमल के मस्तक से राजमुकुट उतार कर निर्लज्जतापूर्वक अपने मस्तक पर धारण कर लिया है। जगमल कायर है, इसके हृदय में न स्वाभिमान है, न अपने स्वत्व और सम्मान के लिए संघर्ष करने की शक्ति। यह जीवित ही शव के समान है।

प्रताप : शक्तिसिंह ! जब इतना दर्द है तुम्हारे हृदय में जगमल के साथ हुए अन्याय के प्रति तो तुम्हें अभिषेक के समय राज-सभा-भवन में आना चाहिए था। इस अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठानी चाहिए थी।

शक्तिसिंह : सामंत जगमल को अपने स्वत्व से वंचित करनेवाले हैं इसका आभास मुझे होता तो मैं अवश्य ही अभिषेक के समय उपस्थित रहता और अपने जीते जी यह अत्याचार नहीं होने देता।

प्रताप : तो अब भी क्या बिगड़ा है ? तुम चाहो तो कल ही सब सामंतों को आमंत्रित कर राज-सभा-भवन में एकत्रित कर देता हूँ, उनसे तुम इस अन्याय का निराकरण करा सकते हो।

जगमल : आप अपने लिए लड़ना चाहते हैं या मेरे लिए।

शक्तिसिंह : मैं तुम्हारे लिए तो लड़ना ही नहीं चाहता क्योंकि तुम भीरु हो। भीरु के साथी भी मारे जाते हैं,

डरपोक सेनानायक कभी विजय प्राप्त नहीं कर सकता।

जगमल : तो स्पष्ट कहो न कि तुम मेवाड़ के महाराणा वनना चाहते हो ?

प्रताप : तो तुम अपना दावा राज-दरवार में रख सकते हो। मैं तुम्हें इसका अवसर प्रदान करूंगा।

शक्तिसिंह : राज-दरवार ? हुँ, वह तो षड्यंत्रों का अड्डा हैं। वहाँ क्या किसी को 'न्याय' प्राप्त होता है ! षड्यंत्रों के विष-बीज राजमहलों के अंत:पुरों में बोए जाते हैं और उनकी वेलें वढ़ कर राजदरवार में पहुँचती हैं वहाँ उनमें ज़हरीले फल लगते हैं। राजा अनेक विवाह करता है उसकी प्रत्येक रानी अपने पुत्र को गद्दी का उत्तराधिकारी वनाना चाहती हैं और अपने रूप के जादू से महाराणा को अपना दास वनाने का यत्न करती है। जो सफल हो जाती है उसी का पुत्र महाराणा द्वारा युवराज घोषित कर दिया जाता है। तव अन्य राजकुमारों की माताएं सामंतों का सहारा लेती हैं। प्रत्येक महारानी के रिश्तेदार सामंतों में होते ही हैं इसलिए राजमुकुट के लिए संघर्ष प्रारंभ हो जाता है।

प्रताप : हाँ, वास्तव में यह वहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है।

शक्तिसिंह : और मेरा दुर्भाग्य यह है कि मेरी माँ जीवित नहीं है। वह मुझे जन्म देकर ही स्वर्ग सिधार गई। धाय की गोद में मेरा पालन हुआ। पिता ने कभी स्नेह के साथ मेरे मस्तक पर हाथ नहीं फेरा।

इंदु : किन्तु आपको सभी राजकुमारों के समान सुख-सुविधाएँ प्रदान की गईं। आपकी माताजी जीवित नहीं थीं इस कारण आपसे भेद-भाव तो नहीं रखा गया ।

शक्तिसिंह : तू भी इन लोगों का साथ दे रही है। जिसे भगवान् ने प्यार से वंचित रखने के लिए ही संसार में ला पटका है उससे उसकी पत्नी भी क्यों प्यार करेगी ?

इंदु : अब इन लोगों के सामने मैं आपके आरोप का क्या उत्तर दूं ? भारतीय नारी के लिए तो पति परमेश्वर के समान हैं। वह उसकी पूजा करती है।

शक्तिसिंह : मुझे पूजा नहीं प्यार चाहिए।

इंदु : प्यार के बिना क्या पूजा होती है ?

शक्तिसिंह : मैं व्यर्थ के प्रश्नों में उलझना नहीं चाहता। जिसे प्यार से वंचित रखा जाता है वह डाकू हो जाता है। जो व्यक्ति साधारण रीति से अपने स्वत्व और अधिकारों को नहीं पा सकता उसे तलवार का सहारा लेना पड़ता है।

प्रताप : किन्तु तुम्हारे सामने तो साधारण और स्वाभाविक मार्ग खुला हुआ है। तुम महाराणा बनने के लिए सामंतों का और मेवाड़ की प्रजा का विश्वास प्राप्त करो ।

शक्तिसिंह : आज मेरी माताजी जीवित होतीं तो सामंतों में भी मेरे साथी होते। (म्यान से तलवार निकालते हुए) अब तो केवल तलवार ही मेरी साथिन है। प्रताप, सामंतों ने यह कह कर तुम्हें राज-सिंहासन पर आसीन किया

है कि सभी राजकुमारों में तुम सबसे अधिक योग्य, शक्तिशाली और पराक्रमी हो। तुम मुझसे द्वंद-युद्ध करो। जिसकी भुजाओं में अधिक बल है वही मेवाड़ के सिंहासन पर आसीन होगा।

प्रताप : शांत, शक्तिसिंह, प्रताप की तलवार भाइयों के गले पर प्रहार करने के लिए नहीं है। वह तो देश के शत्रुओं पर प्रहार करने के लिए है। उसे शत्रुओं के रक्त की प्यास है।

शक्तिसिंह : किन्तु, मैं तुम्हारा शत्रु हूँ, तुम मेरे शत्रु हो।

प्रताप : मैं तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ।

शक्तिसिंह : भारत पर अधिकार कर लेने के पश्चात् विदेशी भी यही कहते हैं कि हम भारत के शत्रु नहीं हैं। भारत को सुख और समृद्धि उपलब्ध कराने के लिए ही हमने भारत का शासन अपने हाथ में लिया है। यही पाखंड तुम मेरे साथ कर रहे हो। तुमको न भाइयों से प्यार है, न अपने देश से। तुम हो महत्त्वाकांक्षी। सारा मेवाड़ तुम्हारी जयकार करे, सारे सामंत तुम्हें अपना प्रभु मानें, तुम्हारे सारे भाई तुम्हारे अनुचर बन कर रहें और अपने पिता के समान तुम निर्द्वंद वैभव का उपभोग करो, यही तुम्हारी हार्दिक अभिलाषा है। तुम पाखंडी और स्वार्थी हो।

प्रताप : शक्तिसिंह ! तुम यदि मेरे हृदय में झाँक कर देख पाते तो ऐसे शब्द अपने मुँह से न निकालते। महत्त्वाकांक्षी और स्वाभिमानी तो प्रत्येक मनुष्य को होना चाहिए।

महत्त्वाकांक्षी तो तुम भी हो, स्वाभिमान की मात्रा तुम में मुझसे अधिक है किन्तु महत्त्वाकांक्षी और स्वाभिमान की भी सीमाएँ और मर्यादाएँ होती हैं इसे तुम संभवतः नहीं जानते। महत्त्वाकांक्षा तो बाप्पा रावल के वंश को उत्तराधिकार में मिलती आई हैं तभी तो उनके वंशजों ने संसार को चकित कर देनेवाले कार्य कर दिखाए हैं। बाप्पा रावल, हमीर, कुंभाजी, पृथ्वीराज, महाराणा संग्राम आदि हमारे पूर्वजों में कितने ही हुए हैं जिनके जीवन से हमें ही नहीं सारे संसार को प्रेरणा प्राप्त होती है। महत्त्वाकांक्षी और स्वाभिमानी होने का अपराध मैं स्वीकार करता हूँ, किंतु

जगमल : आपको पाखंडी और स्वार्थी तो शत्रु भी नहीं कह सकता।

इंदु : और न हमारे नए महाराणा भोग-विलास में लिप्त रहकर अपने कर्तव्य को भूलनेवालों में हैं।

प्रताप : मैं क्या हूँ इसकी परीक्षा देने का अवसर तो मुझे प्राप्त नहीं हुआ है। इतना मैं अवश्य तुम सबसे और संपूर्ण मेवाड़ से, सारे भारत से और सारे संसार तथा देवताओं से कह देना चाहता हूँ कि प्रताप ने भोग-विलास में जीवन की बहुमूल्य घड़ियाँ बिताने के लिए अपने मस्तक पर राजमुकुट धारण नहीं किया है। मुझे व्यक्तिगत सुख-सुविधा और प्रभुता की चाह नहीं है। इसी की यदि मुझे चाह हो तो तो मैं अम्बर, मारवाड़ और हाड़ौती के नरेशों की भाँति अकबर को प्रभु स्वीकार कर सुख-चैन से

जीवन व्यतीत कर सकता हूँ किंतु इसके विपरीत राजसभा में मैंने घोषित किया है कि मेवाड़ की जो भूमि विदेशी सत्ता ने दवा ली है उसका उद्धार करना ही मेरे जीवन का प्रथम लक्ष्य है। जव तक मेरा संकल्प पूरा नहीं होगा मैं किसी राजसी भोग का उपभोग नहीं करूँगा। मैं राजभवन में नहीं रहूँगा। अपने लिए झोपड़ी वना कर उसमें रहूँगा।

इंदु : महाराणाजी, आप धन्य हैं।

प्रताप : जब तक मेवाड़ की प्रजा दुःखी है, ग़रीब है, पराधीन है तब तक राजा को राजमहल में रहकर सुख भोगने का कोई अधिकार नहीं है। मैंने यह भी निश्चय किया है कि जब तक मेरा संकल्प पूरा नहीं होगा मैं सोने-चाँदी के बहुमूल्य पात्रों में भोजन न कर पत्तों की पत्तलों में साधारण ग़रीब आदमियों के जैसा भोजन करूँगा। यह कितने दुःख की वात है कि हमारे भारत के नरेश अपने आपको अन्य मनुष्यों से, सर्व साधारण से भिन्न और श्रेष्ठ समझते रहे हैं—मानो वे भगवान् के ही अंश हैं। चाहे वे दुर्गुणों के अवतार हों तब भी उन्हें प्रजा का रक्त चूस कर भोग-विलासमय जीवन व्यतीत करने का अधिकार है और प्रजा का कर्तव्य है कि वह उन्हें अपना भगवान् माने।

जगमल : तभी तो जब कोई विदेशी हमारे देश के किसी राज पर आक्रमण करता है तो प्रजा सोचती है कि शत्रु से लोहा लेना राजा का कर्तव्य है। हमको इससे क्या? जो भी राजा हो हमारे जीवन क्रम में तो कुछ अंतर आना नहीं है। यदि राजा प्रजा के सुख-दुःख

का साझीदार बने तो उसके हर संकट को प्रजा अपने ऊपर आया हुआ संकट माने ।

शक्तिसिंह : ये वातें मुझे क्यों सुनाई जा रही हैं ? इन ऊँची बातों से मुझे कुछ लेना-देना नहीं है। प्रताप ने राजगद्दी पर षड्यंत्रपूर्वक अधिकार किया है इसलिए आदर्शवाद का जाल फैलाकर यह संसार को धोखा देना चाहते हैं। शक्तिसिंह पर इन बातों का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। यह आयु में मुझसे एक दो वर्ष बड़े हैं। वस यही इनकी योग्यता है। सबसे बड़ा पुत्र ही उत्तराधिकारी हो ऐसा कोई नियम हमारे वंश का नहीं है। नियम रहा भी हो तो वह तोड़ डाला गया है। महाराणा लाखा ने अपने ज्येष्ठ और श्रेष्ठ पुत्र चूड़ावतजी को उत्तराधिकार से वंचित कर छोटे और अल्पवयस्क पुत्र मोकलजी को युवराज पद प्रदान किया और बाद में मोकलजी ही गद्दी पर बैठे, इसी प्रकार महाराणा रायमलजी ने अपने सबसे छोटे पुत्र......

जगमल : दुर्भाग्य से उनका नाम भी जगमल था। हमारे वंश में जगमल नाम विवाद का कारण बन गया है। भगवान् करे कि भविष्य में हमारे वंश मे कोई पिता अपने पुत्र का नाम जगमल नहीं रखे ।

शक्तिसिंह : तो मैं कह रहा था कि रायमलजी ने जगमल को युवराज-पद प्रदान किया ।

इंदु : किन्तु वह सिंहासन पर नहीं बैठ पाए अपने दुराचरण के कारण मार डाले गए।

शक्तिसिंह : किन्तु फिर भी मेवाड़ की राजगद्दी पर महाराणा रायमल के पश्चात् उनके सबसे बड़े पुत्र संग्रामसिंहजी नहीं बैठे, उनके अनुज पृथ्वीराज बैठे। पराक्रम में पृथ्वीराज संग्रामसिंहजी की अपेक्षा श्रेष्ठ थे—एकदम आँधी-तूफान। उनसे सामना करने का साहस संग्राम-सिंह में नहीं था, इसलिए वह अज्ञातवास ही करते रहे।

प्रताप : शक्तिसिंह, पृथ्वीराजजी और संग्रामसिंहजी में जो अंतर था वही तुम में और मुझ में है। राजा को आँधी-तूफान की भाँति विवेक-हीन उत्तेजना में बना रहना ठीक नहीं होता। उसमें साहस तो होना चाहिए, आत्म-विश्वास भी लेकिन साथ ही विवेकपूर्वक योजना बना कर सुशासन करने तथा शत्रुओं का सामना करने की योग्यता भी उसमें होनी चाहिए। तुम्हारे उत्साह और बाहुबल की मैं प्रशंसा करता हूँ किन्तु तुम ज़रा अपने दिमाग़ से भी काम लो तो मेवाड़ के भाग्य ही न खुल जावें। विवेकहीन और पागल व्यक्ति······

शक्तिसिंह : तुम मुझे पागल कहते हो ? शक्तिसिंह अपशब्द सहने का अभ्यस्त नहीं है।

(शक्तिसिंह प्रताप पर तलवार का प्रहार करता है किंतु इंदु बीच में आ जाती है और घायल होकर गिर पड़ती है।)

प्रताप : देखा, तुम्हारे पागलपन का प्रमाण और परिणाम। इसी प्रकार तुम मेवाड़ के कलेजे पर भी प्रहार करोगे। मैं नहीं चाहता था कि तुम्हारे प्रति मैं कठोर

व्यवहार करूँ, किन्तु मुझे तुम्हारे रूप में मेवाड़ के प्रति अभिशाप के दर्शन हो रहे हैं। मैं मेवाड़ के महाराणा की हैसियत से तुम्हें मेवाड़ की सीमा से निर्वासित करता हूँ। इसी क्षण तुम्हें चले जाना होगा।

शक्तिसिंह : किंतु, इंदु !

(शक्तिसिंह इंदु के पास बैठता है।)

प्रताप : तुम इंदु की चिंता न करो, उसके प्राणों की रक्षा हो जावेगी। वह साधारण नारी नहीं है। साक्षात् दुर्गा की अवतार है। साधारण मनुष्य के हाथ की तलवार उसके प्राण नहीं ले सकती। वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जावेगी। वैसे भी तुम्हें उसकी चिंता क्यों होनी चाहिए ? जिसे जन्मभूमि से प्रेम नहीं वह किससे प्रेम कर सकता है ? वह केवल अपने आप को प्यार करता है। ठीक हो जाने पर यदि यह तुम्हारे पास जाना चाहेगी तो इसे भिजवा दिया जावेगा।

शक्तिसिंह : प्रताप, तुम्हारे विष-बुझे वाक्य-बाण ने मेरे हृदय को छेद डाला है। मैं इसका प्रतिशोध लूँगा। अच्छी बात है, अभी तो मैं जाता हूँ किंतु याद रखो आज से न मेरा तुम से नाता है, न मेवाड़ से।

(शक्तिसिंह प्रस्थान करता है।)

प्रताप : जगमल, राजवैद्यजी को बुलवाने का प्रबंध करो।

(जगमल प्रस्थान करता है। कुछ देर में इंदु आँखें खोलती है।)

इंदु : स्वामी !

प्रताप : शक्तिसिंह चला गया है, इंदु ! वह मेवाड़ के भाग्याकाश में धूमकेतु की भाँति उदय हुआ है। उसका मेवाड़ से चला जाना ही मेवाड़ के हित में है।

(इंदु धीरे-धीरे उठ कर बैठती है और अपने कपाल पर आए हुए घाव पर अपनी चुनरी का एक भाग फाड़ कर बाँधती है।)

प्रताप : घबराओ नहीं, इंदु, राजवैद्य आते होंगे । उनके उपचार से तुम्हारा घाव भर जावेगा।

इंदु : कपाल का घाव भर जावेगा, महाराणाजी ! न भी भरे तब भी मुझे कोई चिंता नहीं। मुझे दुःख तो इस बात का है कि मेरे हृदय का घाव नहीं भरेगा। नारी पुरुष की सहधर्मिणी है, सहचरी है, अर्धाङ्गिनी है किंतु इंदु अभागिन है क्योंकि वह सुहागिन होते हुए भी आज अपने आप को विधवा से भी हीन अनुभव करती है। उसे दुःख है कि वह अपने पति को सत्य के पथ पर आरूढ़ नहीं कर सकी और उनका अनुकरण भी नहीं कर सकती।

प्रताप : इसकी चिन्ता न करो, इंदु ! देश से बड़ा कोई नाता नहीं है। तुम वीरांगना हो। दुर्भाग्य के भीषणतम आघात को हँसते-हँसते सहने की शक्ति तुम में है। क्रोध के आवेश में शक्तिसिंह ने मुझ पर प्राण-घातक प्रहार किया था जिसे तुमने बीच में पड़कर अपने ऊपर ले लिया। दो पथभ्रष्ट भाइयों

को राह पर लाने के लिए तुमने अपने प्राणों की भी चिंता न की। तुमने नारी-जाति का मुख उज्ज्वल किया है।

इंदु : अब वह कहाँ हैं ?

प्रताप : मैंने उन्हें मेवाड़ से निर्वासित कर दिया है।

(इंदु खड़ी हो जाती है।)

इंदु : तब मेरा मेवाड़ में क्या काम? मैं भी उनके साथ जाऊँगी। पति के चरणों में ही नारी की गति है।

प्रताप : किन्तु क्या तुम समझती हो कि शक्तिसिंह अब शांत बैठ सकेगा? वह प्रताप से प्रतिशोध लेने के लिए उन्मत्त हाथी की भाँति बेचैन रहेगा। प्रताप को प्रताप की चिंता नहीं है उसे तो चिंता मेवाड़ की है। क्रोध मनुष्य के विवेक को छीन लेता है। शक्तिसिंह प्रताप से प्रतिशोध लेने के लिए मेवाड़ पर वज्र बन कर टूटेगा।

इंदु : और जब तक मैं जीवित हूँ उन्हें ऐसा नहीं करने दूँगी। मैं देशद्रोही की पत्नी होने का कलंक अपने मस्तक पर नहीं लगने दूँगी, महाराणाजी!

प्रताप : इंदु तुम देवी हो, महाशक्ति हो। तुम्हारी जैसी नारी के दर्शन-मात्र से मानव-जाति का कल्याण होता है किन्तु शक्तिसिंह में तुम्हारी महिमा को समझने की बुद्धि नहीं है। तुम उसके साथ जाने का यत्न करोगी और उसकी राह में रुकावट डालोगी तो वह तुम्हारा वध करने में भी संकोच नहीं करेगा।

इंदु : कुछ भी हो, महाराणा जी। उनके साथ जाना ही मेरा धर्म है। मैं जानती हूँ कि उनके क्रोध पर न स्नेह विजय पा सकता है, न कोई तर्क। इस समय उनके पास न आँखें हैं, न कान। न वह देख सकते हैं न कुछ सुन सकते हैं इसीलिए तो मैं भयभीत हूँ। भयभीत अपने या उनके भविष्य के लिए नहीं। इस विराट मानव जाति रूपी महासिंधु में हम दोनों का क्या अस्तित्व ? महासमुद्र में दो बिंदु। मेरा अस्तित्व वाष्प बनकर उड़ जावे तो संसार का क्या घटेगा और वह भी न रहेंगे तो इतिहास उनके लिए एक अश्रु भी नहीं बहावेगा। अतः मैं कहती हूँ कि आप मेरे जीवन की चिंता न करें।

प्रताप : इंदु, तुम व्यक्ति को जितना महत्त्व-हीन समझती हो वह वैसा है नहीं। मानव जाति-रूपी महासिंधु का प्रत्येक विंदु महत्त्वपूर्ण नहीं है किंतु काल-चक्र इन अगणित बिंदुओं में से किसी को भी महत्त्वपूर्ण बना सकता है। महासिंधु से विछुड़कर जो जल-बिंदु आकाश में उड़ जाते हैं वे सीपी के मुँह में गिरकर मोती भी बन सकते हैं, विषधर के मुँह में गिरकर गरल भी। वे ही जल-बिन्दु अमृत-घट में गिरकर अमृत रूप भी हो सकते हैं। इसलिए मैं कहता हूँ कि तुम अपने जीवन को व्यर्थ नष्ट करने का यत्न न करो।

इंदु : किन्तु, महाराणाजी, यह बात आपने उनके संबंध में क्यों नहीं सोची ? एक मेवाड़ी, एक सूर्यवंशी, एक असाधारण मानव जिसे आपने अपने देश के साधारण

जीवन से विलग कर दिया है उसके भाग्य में मोती बनना नहीं लिखा है, उसे मोती बनाने के लिए कोई सीपी उसकी प्रतीक्षा नहीं कर रही है, हाँ अनेक विषधर उसे आत्मसात् करने को प्रस्तुत हैं। महाराणाजी, भारत रणभूमि में यम से भी पराजित नहीं होता किंतु उसे तो उसके प्राणों का गरल ही मार डालता है। बोलिए, क्या मैं उन्हें अमृत करने के स्थान पर गरल बनने दूँ ?

प्रताप : इंदु, मुझसे भूल हुई। मुझे मेवाड़ का महाराणा नहीं बनना चाहिए था। मेरे स्थान पर शक्तिसिंह के मस्तक पर छत्र होता तो मेरा क्या घटता था ? मेवाड़ को शक्तिसिंह जैसा शक्तिशाली और पराक्रमी भूप मिलता और इंदु-जैसी पुण्यमयी वीरांगना की स्नेह-छाया मेवाड़ की प्रजा को प्राप्त होती। मेवाड़ स्वर्ग ही बन जाता न ? इंदु, मुझे शक्तिसिंह के आधीन मेवाड़ के एक साधारण योद्धा के रूप में विदेशियों से संग्राम करने में तनिक भी आपत्ति नहीं है। मैंने शक्तिसिंह को जो निर्वासन की आज्ञा दी है उसे वापस लेने को मैं प्रस्तुत हूँ। तुम स्वस्थ होकर उसे लौटा लाओ। मैं राजगद्दी छोड़कर अपने हाथ से उसको छुंगी पहनाऊँगा।

इंदु : आप उन्हें राजमुकुट की रिश्वत देकर मेवाड़ का बनावें, यह मुझे स्वीकार नहीं है। मेबाड़ के राज-सिंहासन पर बैठने के बाद ही वे मेवाड़ के होवें इसमें उनकी महानता नहीं सिद्ध होगी अपितु इसे स्वार्थ-परता ही कहा जावेगा और ऐसे व्यक्ति पर मेवाड़ की प्रजा श्रद्धा कैसे करेगी ? सर्वस्व बलिदान करने

को प्रस्तुत सेवा-व्रती व्यक्ति प्रभुता और सत्ता का भूखा नहीं होता। वह सच्चे अर्थों में सेवाव्रती बनें तभी मैं अपने जीवन को सार्थक मान पाऊँगी।

(इंदु बहुत कठिनाई से अपने घाव की पीड़ा को सह रही थी। खड़े रहकर वार्तालाप करने से उसकी पीड़ा बढ़ती है और वह कपाल पकड़ कर बैठ जाती है।)

इंदु : ओह ! यह पीड़ा बढ़ती ही जाती है।

प्रताप : और तुम चाहती हो कि इसी स्थिति में तुम शक्तिसिंह के साथ जाओ।

इंदु : उनके साथ मेरा जाना तो अनिवार्य है, महाराणा-जी ! किन्तु शरीर साथ नहीं दे रहा। आत्मा की प्रेरणा से मैं अभी तक आपसे चर्चा करती रही किन्तु जान पड़ता है कि मेरी साँसें मुझसे रूठ रही हैं। यम के दूत मुझे लेने आ रहे हैं।

(इंदु लेट कर आँखें बंद कर लेती है।)

प्रताप : छिः बेटी,

(प्रताप इंदु के पास बैठ कर उसके मस्तक पर हाथ रखता है।)

प्रताप : तुम मेरे छोटे भाई की पत्नी हो। कुल-मर्यादा के अनुसार मैं सान्त्वना देने के लिए भी तुम्हारे शरीर का स्पर्श नहीं कर सकता, इसीलिए तुम्हारे घाव पर पट्टी तक न बाँध सका, किन्तु, अब बेटी कहने पर मुझे तुम्हें स्पर्श करने का अधिकार प्राप्त हो गया है।

(प्रताप इंदु की कलाई हाथ में लेकर नाड़ी की परीक्षा करता है। इंदु फिर आँखें खोलती है।)

इंदु : घबराओ नहीं, महाराणाजी। मैं मरूँगी नहीं। मेरा संकल्प यम के दूतों से लड़ेगा। मुझे इसी स्थिति में पालकी में बैठाकर उनके पास पहुँचा दीजिए।

प्रताप : वेटी!

इंदु : क्या कहा, वेटी! कितना मधुर और पवित्र संबोधन है। कितना अच्छा होता यदि मैं वास्तव में आपकी वेटी होती। एक वीर-हृदय, देश और जाति के लिए जीवन उत्सर्ग करने के लिए तत्पर महापुरुष की पुत्री होना कितने सौभाग्य की बात है? इस संवोधन को सुन लेने के बाद मैं शांतिपूर्वक मर सकूँगी।

(इंदु फिर आँखें बंद कर लेती है।)

प्रताप : किन्तु, तुम तो कह रही थीं कि तुम मरोगी नहीं। तुम्हें मरना भी नहीं चाहिए। तुम्हें जीवित रहना है, इंदु! इस मेवाड़ को जीवित रखने के लिए तुम्हें जीवित रहना है। अभी तो मेवाड़ की स्वाधीनता का संग्राम शुरू भी नहीं हुआ और तुम आँखें बंद करने लगीं। तुम्हें तो मेवाड़ की आँखें खोलनी हैं। क्या स्वाधीनता का संग्राम केवल पुरुषों के बाहु-बल से जीता जाता है? नहीं, नहीं, इसके लिए मातृ-शक्ति का सहयोग और आशीर्वाद नितांत आवश्यक है। तुम्हें मेवाड़ के प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्राम में जाकर स्वाधीनता की ज्योति प्रज्वलित करनी है। माताओं से अपने पुत्र, पत्नियों से उनके पति और वहनों से उनके भाई माँगने हैं स्वाधीनता के संग्राम में सर पर कफ़न बाँधकर अग्रसर होने के लिए। भूल जाओ, वेटी, कि तुम शक्तिसिंह की पत्नी हो। याद

रखो, केवल एक ही नाता कि तुम मेवाड़ की पुत्री हो—बल्कि यह कहो कि मेवाड़ की माँ हो।

(इंदु आंखें खोलती है।)

इंदु : (कुछ बेहोशी जैसी स्थिति में) हाँ, मैं मेवाड़ की माँ हूँ। वह मेरे पति नहीं पुत्र हैं। पति-पत्नी का नाता टूट गया है किंतु यह नाता टूट जाने से भी क्या होता है? वह मेवाड़ के पुत्र तो हैं तब क्या माँ बेटे को पथ-भ्रष्ट होने दे? माँ ऐसा कैसे होने देगी? महाराणा-जी नए नाते के अनुसार तुम भी मेरे पुत्र हो। बोलो, यदि तुम देश-द्रोह करो तो क्या मैं तुम्हें क्षमा कर दूँ—लेकिन नहीं तुम ऐसा नहीं करोगे। वह भी ऐसा नहीं करेंगे। मैं उन्हें ऐसा नहीं करने दूँगी। मैं जाऊँगी। मुझे रोको मत।

(इंदु उठना चाहती है लेकिन प्रताप उसे वापस लिटा देता है इंदु फिर आँखें बंद कर लेती है। जगमल राजवैद्य को लेकर आता है। राजवैद्य इंदु की नाड़ी की परीक्षा करता है।)

(पटाक्षेप)

दूसरा अंक

पहला दृश्य

(स्थान–उदयपुर में उदयसागर के तट पर एक खुला स्थान। रंगमंच पर एक दुग्ध-धवल चाँदनी बिछी हुई है। पिछले पर्दे के आगे भोजन करने के लिए आसंदी तथा भोजन का थाल रखने के लिए चौकी रखी हुई है। महाराणा प्रताप जगमल के साथ प्रवेश करता है। इस समय दोनों ही साधारण पोशाक में हैं।)

जगमल : आपने भोजन करने के लिए एक ही चौकी लगवाने की आज्ञा क्यों दी है, महाराणा जी ?

प्रताप : भैया जगमल ! इसके पहले कि मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूँ मैं तुमसे कहना चाहता हूँ कि तुम सदा ही मुझे महाराणा कहकर सम्बोधित न किया करो। मैं भी मनुष्य हूँ, जगमल। मेरे हृदय में भी स्नेह है, प्यार है, ममता है। मुझे भी प्यार चाहिए। मैं महाराणा हो गया हूँ अथवा बना दिया गया हूँ इसीलिए क्या अपने स्वजनों से मेरे सम्पूर्ण प्राकृतिक संबंध समाप्त हो गए हैं। भैया, मुझे अपने भाइयों का स्नेह चाहिए। तुम मुझे दादाभाई कहो तो मुझे कितना आनंद प्राप्त हो ?

जगमल : दादाभाई, आप दया के सागर हैं, स्नेह के सरोवर हैं। आपको दादाभाई ही कहकर मुझे आत्मिक

संतोष प्राप्त होता है किंतु आप भी परंपराओं में बँधे हुए हैं और मैं भी। राजा के प्रति राज-परिवार को सुनिश्चित शिष्टाचारों का पालन करना अनिवार्य है। भगवान राम के वंशज सिसौदिया राजवंश का नित्य का जीवन-क्रम एक शृंखला में बँधा हुआ है उससे न आप तिलमात्र बिचलित हो सकते हैं न परिवार का अन्य व्यक्ति। जब राजवंश के सदस्य और सामंत आदि भोजन करने बैठते हैं तव भी प्रत्येक व्यक्ति के महत्व के अनुसार उसके बैठने का स्थान निश्चित रहता है। हमारा उठना-बैठना, सोना-जागना, खाना-पींना, राज-दरबार में भाग लेना, युद्ध-भूमि में जाना तात्पर्य यह कि हमारी प्रत्येक धड़कन को शिष्टाचार, नियम और व्यवस्था में बांध रखा है और इस परंपरा में कोई व्यतिक्रम होता है तो तलवारें तन जाती हैं रक्त की नदियाँ वह पड़ती हैं और सारे नाते टूट जाते हैं।

प्रताप : जगमल, मुझे मनुष्य और मनुष्य में भेद डालने वाली परम्पराओं से घृणा है। हम सब बराबर होकर क्यों नहीं रह सकते ? किसी एक व्यक्ति को राजा मान लो यह तो ठीक क्योंकि शासन के अनुशासन की रक्षा के लिए किसी के साथ में सत्ता और शक्ति सौंपना अनिवार्य है लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि राजा देवता है और शेष सभी उसके अनुचर निम्न श्रेणी के व्यक्ति। हमारे यहाँ राजा को सोने के थाल में भोजन परोसा जाता है और अन्य भाइयों, राजकुमारों और सामंतों को चाँदी

के थालों में। हर कदम पर इस प्रकार के भेद-भाव से भरे हुए व्यवहारों के कारण ही राज-परिवारों में शक्तिसिंह जन्म लेते हैं। मैंने शक्तिसिंह को निर्वासित कर दिया किन्तु सच पूछो तो, जगमल, यह मेरा अन्याय ही है। प्रत्येक स्वाभिमानी व्यक्ति समानाधिकार की मांग करता है। यह हृदय का धर्म है। हृदय-धर्म के विपरीत जो परम्पराएँ, रूढ़ियाँ और मर्यादाएँ समाज खड़ी करेगा वे विद्रोह को जन्म देंगी।

जगमल : मेरे प्रश्न का उत्तर तो आपने दिया नहीं।

प्रताप : अरे हाँ, मैं तो भूल ही गया था। तुम जानते हो कि आज अम्बर-नरेश मानसिंह कुशवाहा हमारे यहाँ भोजन करेंगे। अभी आने वाले ही हैं।

जगमल : यह मुझे बताने की आवश्यकता नहीं लेकिन मुझे आश्चर्य तो इस बात का है कि सम्मानित अतिथि को क्या अकेले ही भोजन कराया जावेगा? क्या उनके सम्मान और साधारण शिष्टाचार के पालन के लिए हम लोगों को उनके साथ भोजन के लिए नहीं बैठना चाहिए?

प्रताप : तुम्हारी जिज्ञासा स्वाभाविक है, जगमल। किन्तु जो व्यक्ति अपने वंश, अपनी जाति और देश के सम्मान को तिलांजलि दे बैठा है उसके सम्मान की रक्षा करने का शिष्टाचार हमें क्यों पालना चाहिए? क्या यह पर्याप्त नहीं कि हमने उन्हें ससम्मान अपने यहाँ ठहराया, उनके भोजन का प्रबंध किया? हमारी भाँति कुशवाहा भी भगवान रामचंद्र के वंशज हैं।

हम विदेशियों से भारत को मुक्त करने के लिए जंगल-जंगल भटक रहे हैं और ये उनसे नातेदारी कर रहे हैं। सच पूछो तो ऐसे व्यक्तियों का मुँह देखना भी पाप है।

जगमल : किन्तु घृणा करने से क्या हम उन्हें रास्ते पर ला सकेंगे ?

प्रताप : जगमल, यदि इन्हें हृदय लगाने से इनका हृदय-परिवर्तन हो सकता तो कितना अच्छा होता। पतन के जिस गर्त में ये गिर चुके हैं उससे इन्हें निकालने का कोई मार्ग नहीं। इन देशद्रोही नरेशों को रास्ते पर लाने का कोई उपाय होता—इसकी कोई संभावना होती तो प्रताप इनके मार्ग में अपनी आँखें बिछा देता लेकिन इसकी कोई संभावना नहीं कि ये कभी अपने कर्तव्य को समझेंगे। मनुष्य का पतन प्रारंभ होता है तो उसे रोक पाना विधाता के वश में भी नहीं रहता।

जगमल : किन्तु मानसिंहजी के शरीर में भी वही रक्त बहता है जो हमारे शरीर में। अकबर की अपेक्षा वह हमारे अधिक निकट हैं। हम उन्हें प्राप्त करने का, अपनाने का यत्न क्यों न करें ?

प्रताप : जो व्यक्ति व्यक्तिगत सुख, सुविधा, प्रभुता और वैभव प्राप्त करने के लिए अपने देश की स्वाधीनता को बेच देने में संकोच नहीं करता उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? राजा का वास्तविक धर्म प्रजा की सेवा करना होता है, देश की स्वाधीनता और सम्मान की रक्षा करने में सर्वस्व न्योछावर करना उसका

कर्तव्य होता है लेकिन जो व्यक्ति राजा का अर्थ सेवक नहीं स्वामी करता है उसकी आत्मा पतन की पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी होती है। जो अधिक मूल्य देगा अर्थात् जो उसे अधिक सत्ता, अधिक वैभव, अधिक सुख-साधन दे सकेगा वह तो उसी का होगा। आज देने के लिए प्रताप के पास क्या है ? अकबर ने मानसिंह को सम्मान दिया है, उसके राज्य की सीमा में वृद्धि की है और अपनी सेना का सेनापति बनाया है। प्रताप यह सब मानसिंह को कहाँ से देगा ?

जगमल : इसका तो अर्थ हुआ कि मानसिंह राजपूत नहीं व्यापारी है।

प्रताप : व्यापारी होना भी कोई बुरी बात नहीं, लेकिन व्यापार अपनी वस्तु का किया जाता है। चोरी के माल को, अथवा धरोहर को बेचना तो व्यापार नहीं है। भले ही अकबर ने अम्बर-नरेश से तथा अन्य राज्य के राजाओं से मित्रता की संधि की है किंतु वास्तविक अर्थों में उसने इन राजाओं को अपनी आधीनता स्वीकार करने को विवश कर दिया है और ये राजा स्वयं तो पराधीन हुए हैं साथ ही अपनी प्रजा को भी विदेशी सत्ता का दास बना दिया। इसका क्या अधिकार था इन्हें ? देश तो प्रजा का है राजा का नहीं, राजा तो वास्तव में देखा जावे तो प्रजा का सेवक है। प्रजा के धन पर ही तो उसका वैभव निर्भर है।

जगमल : किंतु इन राजाओं को प्रजा अपने पथ-भ्रष्ट राजाओं

के प्रति विद्रोह क्यों नहीं करती ? क्यों प्रजा दासता की पीड़ा को अनुभव नहीं करती ?

प्रताप : इसका कारण है, जगमल ! हम राजाओं ने कुछ स्वार्थी धर्म-गुरुओं के सहयोग से प्रजा को अपनी शक्ति और अधिकारों से अनभिज्ञ रखने का सफल षड़यंत्र किया है। धर्म के नाम पर प्रजा में इस अंध-विश्वास को जन्म दिया गया कि राजा भगवान् का वंश है। राजा चाहे देश द्रोही हो, अत्याचारी और व्यभिचारी हो प्रजा तो उसकी आज्ञा का पालन करना ही अपना धर्म मानती है। विदेशी हमारे देश में आकर सम्राट् बन जाता है तो हमारे देश के निवासी उसे भी भगवान् का अवतार मानते हैं। उससे विद्रोह करने की आवश्यकता भी वे अनुभव नहीं करते। मेरे हृदय को तो इस स्थिति से बहुत व्यथा होती है।

(एक परिचारिका आती है)

परिचारिका : अन्नदाता ! महाराजा मानसिंहजी आ गए हैं।

प्रताप : उन्हें ससम्मान यहाँ ले आओ और उनके लिए भोजन परोसने का प्रबंध करो ?

परिचारिका : जो आज्ञा, महाराणाजी।

(परिचारिका का प्रस्थान)

प्रताप : जगमल ! महाराजा मानसिंह के स्वागत-सत्कार का भार मैं तुम पर छोड़ कर जाता हूँ।

जगमल : तो उनके भोजन करते समय आप उपस्थित भी नहीं रहेंगे।

प्रताप : नहीं ।

जगमल : इसको यह बुरा मानेंगे । वह अपने अपमान से आग-बबूला हो जावेंगे और प्रतिशोध लेने के लिए कटिबद्ध हो जावेंगे । चोट खाए हुए सर्प की भाँति वह भयानक और घातक हो उठेंगे ।

प्रताप : उन्हें इस बात की अनुभूति होनी चाहिए कि विदेशियों को उन्होंने जो सहयोग दिया है वह भारत की आत्मा को स्वीकार नहीं है । आज भले ही आगरा के राज-दरबार में उनका सम्मान होता हो लेकिन भारत का स्वाभिमान उनसे घृणा करता है ।

जगमल : किंतु मानसिंह अभी तक प्रत्यक्ष में हमारे शत्रु नहीं बने हैं, भले ही मित्र भी नहीं किंतु आज से वह हमारे काल-बैरी बन जावेंगे । अकबर अभी तक शांत बैठा है अर्थात् चित्तौड़ गढ़ एवं उससे संलग्न मेवाड़ का कुछ भाग लेने के बाद अब हमसे छेड़-छाड़ उसने प्रारंभ नहीं की है लेकिन मानसिंह अब उन्हें मेवाड़ के शेष भाग पर अधिकार करने के लिए उत्तेजित करेंगे ।

प्रताप : अकबर ने मेवाड़ राज्य के एक भाग पर अपना अधिकार जमा रखा है क्या यह हमारे साथ छेड़-छाड़ नहीं है ? दाजीराज भले ही इसे शांति की स्थिति मान सकते थे लेकिन मेरी मान्यता है कि हम अकबर के साथ युद्ध की स्थिति में हैं । चाहे आज हमारी सेनाओं में मुठभेड़ नहीं हो रही हो लेकिन हमारे हृदय तो युद्ध-रत हैं । यह अस्वाभाविक

शांति मेरी सहन-शक्ति के वाहर है। मैं अकबर को युद्ध के लिए आमंत्रित करना चाहता हूँ और इसलिए भी मानसिंह को इस प्रकार छेड़कर उत्तेजित कर देना मैंने आवश्यक समझा है। मुझे यह श्मशान के जैसी शांति स्वीकार नहीं है।

(परिचारिका सोने के थाल में भोजन परोस कर लाती है और चौकी पर रखती है। दूसरी परिचारिका एक गंगाजली में पानी लेकर आती है। एक ओर से प्रताप प्रस्थान करता है और दूसरी ओर से मानसिंह आता है। वह साधारण वेशभूषा में ही है।)

जगमल : महाराणा प्रताप का अनुज जगमल महाराजा मानसिंह का स्वागत करता है।

मानसिंह : महाराणाजी यहाँ नहीं हैं क्या ?

जगमल : उनके मस्तक में पीड़ा है इसलिए वह आपका स्वागत करने के लिए उपस्थित नहीं हो सके। उनके प्रतिनिधि के रूप में मैं आपका हार्दिक स्वागत करता हूँ। हाथ धोकर आप भोजन कीजिए।

मानसिंह : मैं महाराणाजी के मस्तक की पीड़ा को समझता हूँ, जगमलजी। किंतु अब इस पीड़ा का कोई इलाज नहीं है। महाराणा प्रताप के स्वाभिमान का मैं आदर करता रहा हूँ और करता हूँ और उनका मस्तक ऊँचा ही रहे इसमें मैं भी गर्व अनुभव कर लेता हूँ, किंतु महाराणाजी के मस्तक में मेरा मुख देखने से भी पीड़ा होती है तो इस मस्तिष्क का इलाज मुझे

करना ही पड़ेगा। इस अपमान का बदला यदि मैंने रणभूमि में नहीं लिया तो मैं राजपूत नहीं।

(प्रताप प्रवेश करता है। उसकी आँखें क्रोध से लाल हो रही हैं।)

प्रताप : अपने आपको राजपूत कहते हुए शर्म नहीं आती तुम्हें, मानसिंह। आज विदेशी तुम्हारा अपना है, तुम्हारा फूफा है, तुम्हारा सम्राट् है और प्रताप तुम्हारा बैरी। अरे तुम भी उसी राम के वंशज हो जिसका प्रताप। मेरे और तुम्हारी कायाओं में एक ही रक्त प्रवाहित है और तुम अपने देश से द्रोह करने में संकोच नहीं करते। सुनो मानसिंह, कान लगा कर सुनो कि मैं प्रताप और मानसिंह दो विपरीत पथ के राही हैं। हमारे मिलन-मार्ग में आदर्शों और मान्यताओं के पर्वत खड़े हैं। मैं जानता हूँ कि देश के स्वाभिमान और स्वतंत्रता के लिए जिस सर्वस्व त्याग की अपेक्षा है वह तुममें नहीं है। ऐसी स्थिति में हमारा मिलन-स्थल रण-भूमि ही है। तुम्हारे साथ विदेशियों की और तुम्हारी अपनी विशाल सेना है और मेरे पास केवल मेरा साहस है और मेरे थोड़े से मृत्युंजय साथी हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे साथी संसार को चकित कर देने वाले विक्रम का परिचय देंगे।

मानसिंह : मानसिंह भी मिट्टी का बना हुआ नहीं है, प्रताप। तुम्हारा अभिमान ही तुम्हारा सबसे बड़ा शत्रु है। अच्छी बात है मैं जाता हूँ। अब 'हमारी मुलाकात रणभूमि में होगी'।

(मानसिंह सक्रोध प्रस्थान करने लगता है इतने में ही इंदु प्रवेश करती है यह यद्यपि नारियोचित वस्त्रों में है लेकिन उसके हाथ में तलवार है ।)

इंदु : ठहरो, अम्बर-नरेश, मुझे भी तुमसे कुछ कहना है। राजस्थान की सती और वीरांगना नारियों का भी तुम पर आरोप है। तुमने और तुम्हारे पिताजी ने विदेशियों को अपनी बहन-बेटियाँ रिश्वत के रूप में देकर जो जघन्य कार्य किया है समय तुमसे उसका प्रतिशोध लेने के लिए प्रस्तुत है।

(इंदु म्यान से तलवार निकालती है।)

इंदु : निकालो अपनी तलवार।

मानसिंह : कौन हैं आप ? मेवाड़ के राजघराने की महिलाएँ पर-पुरुष के सामने इस प्रकार निर्लज्ज होकर नहीं आतीं।

इंदु : लाज-शर्म की बात तुम किस मुँह से करते हो, मानसिंह। मेवाड़ के राजवंश की महिलाएँ ही क्या, साधारण नारियाँ भी अपनी मर्यादा से विचलित नहीं होतीं इसका इतिहास साक्षी है। चित्तौड़ दुर्ग में महारानी पद्मिनी और कर्मवतीजी तथा उनके साथ जौहर की जाज्वल्यमान लपटों में भस्म हो जानेवाली सहस्रों वीरांगनाओं की गाथाएँ पुकार-पुकार कर कह रही हैं कि मेवाड़ की नारियाँ तुम्हारे जैसे कापुरुषों से कहीं श्रेष्ठ हैं। क्षत्रिय नारियों का कार्यक्षेत्र केवल घर नहीं है, संकट के अवसर पर रणभूमि में जाकर दैत्यों का संहार करने के लिए रणचंडी के रूप वे रखती आई हैं।

मानसिंह : किंतु मानसिंह दैत्य नहीं, मानव है, देवि !

इंदु : तुम मानव हो, मानसिंह? जिस व्यक्ति ने स्वाभिमान गँवा दिया उसे क्या मानव कहा जा सकता है? [तुम पालतू कुत्ते की तरह जो तुम्हारे आगे टुकड़े डालता है उसके आगे दुम हिलाते हो और अपने भाइयों पर गुर्राते हो।]

मानसिंह : मुझे विश्वास नहीं होता कि मेवाड़ का इतना पतन हो चुका है कि वह अपने घर आए अतिथि का एक महिला द्वारा अपमान कराएगा।

प्रताप : [मानसिंह तुमने राजस्थान के उज्ज्वल नाम पर कलंक लगाया है। राजस्थान भारत की ढाल बन कर रहा है। भारत पर विदेशियों द्वारा किए जानेवाले प्रहारों को उसने आगे बढ़कर अपनी फौलादी छाती पर सहा है। यदि ढाल ही अपना कार्य नहीं करेगी तो भारत को पराधीनता से कौन बचा सकेगा? तुमने राजस्थान के राजाओं को कायरता के पथ पर अग्रसर होने का मार्ग प्रशस्त किया है।]

जगमल : और इसी उद्देश्य से आप यहाँ आये थे कि किसी प्रकार मेवाड़ भी तथाकथित सम्राट् के आगे अपना मस्तक झुकावे किंतु [सीसौदिया रक्त अभी ठंडा नहीं हुआ है। स्वर्ग के सुखों के बदले भी वह अपनी स्वतंत्रता नहीं बेच सकता।]

मानसिंह : सीसौदिया-रक्त की चर्चा मत करो, जगमलजी। उसमें भी सगरसिंहजी और शक्तिसिंहजी जैसे समझदार व्यक्ति हैं जो पहाड़ से टकराकर अपने

मस्तक को चूर्ण करने की अपेक्षा उसका आश्रय ग्रहण करना उचित समझते हैं।

प्रताप : तो क्या शक्तिसिंह भी मेवाड़ के कलेजे पर छुरी भोंकने के लिए शत्रुओं के आश्रय में जा पहुँचा है ?

मानसिंह : हाँ, महाराणाजी। मैंने स्वयं उसको सम्राट् अकबर के सम्मुख उपस्थित किया था। सम्राट् गुणग्राही हैं। उन्होंने सिंहासन से उठकर उन्हें गले लगा लिया और राजदरबार में ऊँचा स्थान प्रदत्त किया। उन्हें अपनी वीरता और पराक्रम का उपयोग करने का अवसर देने के लिए तुरंत ही दो हजार अश्वारोही सेना का सेनापति बनाया। इसी प्रकार सगरसिंह भी आपके भाई हैं—वह सम्राट् की कृपा से चित्तौड़ के स्वामी हैं। सम्राट् को राज्य की भूख नहीं है वह तो नाम-मात्र के बंधन हम लोगों पर रखकर हमें स्वाधीन ही रखना चाहते हैं। मैं महाराणाजी से फिर अनुरोध करता हूँ कि भावनाओं में बहकर तथ्यों की उपेक्षा न करें। इसके पहले कि सम्राट् सैन्य शक्ति से संपूर्ण मेवाड़ को जीतकर शक्तिसिंहजी को मेवाड़ के राजसिंहासन पर बैठायें मैं चाहता था कि आपको एक अवसर अपनी भूल सुधारने का दिया जावे। इसीलिए मैं आया था।

इंदु : आप डूबते बामना ले डूबे यजमान। आपने नाक कटाई सो तो ठीक लेकिन मेरे स्वामी को भी नकटों की जमात में तुमने खींच लिया। मैं यह नहीं सह सकती। मैं अपने हाथ से उनके कलेजे में छूरी भोंक दूँगी। वे मेरे पति हैं तो क्या ?

मानसिंह : तो आप शक्तिसिंहजी की…

इंदु : दुर्भाग्य से उनकी पत्नी हूँ—लेकिन अब शत्रु। पता नहीं किन दुरात्माओं ने हिंदुओं के धर्मशास्त्रों में यह व्यवस्था दी है कि पति का धर्म ही नारी का धर्म है—पति का मार्ग ही नारी का मार्ग है, पति ही नारी के लिए परमेश्वर है लेकिन मैं इस व्यवस्था को नहीं मानूँगी—मैं युद्ध करूँगी उनसे युद्ध करूँगी। मुझे आज्ञा दीजिए महाराणाजी, कि मैं आगरा जाकर उनसे दो हाथ कर सकूँ।

मानसिंह : उतावली न हो, रानीजी। आपको आगरा जाने की आवश्यकता नहीं। आगरा वाले स्वयं काली घटा के समान उमड़-घुमड़ कर मेवाड़ में आवेंगे। दो हाथ नहीं यहाँ हजारों हाथ करने का अवसर प्राप्त होगा। आगरा वालों के हाथों की सहस्रों तलवारों की चमक से मेवाड़ का कोना-कोना थर्रा उठेगा। रक्त की धारा से मेवाड़ की भूमि स्नान करेगी। मेवाड़ के राजसिंहासन पर शक्तिसिंह सगौरव आसीन होंगे और आप उनके बगल में विराजमान होंगी।

इंदु : मैं यमलोक में एक ही आसन पर उनके साथ बैठूँगी।

प्रताप : मानसिंह! मैं तुम्हारी चुनौती स्वीकार कर चुका हूँ इस संबंध में अधिक चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है। वीर पुरुष बात नहीं करते पुरुषार्थ करके दिखाते हैं।

इंदु : हाँ, इस समय तुम हमारी मुट्ठी में हो। तुम्हारा मस्तक ज्वार के भुट्ठे की तरह काट कर गिराया

जा सकता है लेकिन इससे मेवाड़ के पराक्रम को बट्टा लगेगा। इसलिए मैं रक्त के घूंट की भाँति आज अपने क्रोध को पी जाऊँगी। मेवाड़ में रक्त की बाढ़ प्रथम बार नहीं आएगी। इसने ऐसी बरसातें बहुत देखी हैं। तुम भी एक बार ऐसी बरसात लेकर आओ। मेवाड़ इस बरसात में स्नान करता हुआ आनंद से अट्टहास करेगा।

मानसिंह : अच्छी बात है, आप लोग बेमौत मरना चाहते हों तो इसमें मेरा क्या चारा? मेरा अपमान कर तुमने सोते हुए सिंह को जगा दिया है।

जगमल : मेवाड़ गीदड़ भमकियों से डरने वाला नहीं।

मानसिंह : यह तो समय बतावेगा कि सिंह कौन है और गीदड़ कौन?

प्रताप : जो अपने प्राणों की रक्षा करने के लिए शत्रु के आगे आत्मसमर्पण कर देता है वही गीदड़ होता है और जो आन नहीं छोड़ता, आन के लिए प्राण दे देता है वही सिंह है। मेरा क्रोध अकबर पर उतना नहीं है जितना अपने भाइयों पर, तुम जैसे भाइयों पर जो भारत को पराधीनता की बेड़ियों में कसने के लिए विदेशियों के सहायक बनने में गौरव समझते हों। हमें बाहरी शत्रुओं से उतना खतरा नहीं है जितना अपने भीतर के देश-द्रोहियों से।

मानसिंह : यह तो अपना-अपना दृष्टिकोण है, प्रताप! तुम जिसे देश-द्रोही कहते हो मैं उसे देश-प्रेम समझता हूँ। देश की एकता और खुशहाली के लिए ही हमने सम्राट् अकबर की अधीनता स्वीकार की है लेकिन

तुम्हारे आगे अपनी सफ़ाई देने की मुझे क्या आवश्यकता ? मेरा हृदय शुद्ध है, आत्मा सत्य के पथ पर है।

जगमल : कौन सत्पथ पर है और कौन कुपथ पर इसका निश्चय समय करेगा, इतिहास करेगा । देश-द्रोही हज़ार लड़ाइयाँ जीतेंगे तब भी इतिहास उन्हें देश-द्रोही ही कहेगा और देश के लिए संग्राम करते हुए विफल रहकर अपने प्राणों की आहुति देने वालों का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा।

मानसिंह : अच्छी बात है तो अब मैं मेवाड़ से विदा लेता हूँ। मुझे इस बात का सदा दुःख रहेगा कि मेवाड़ का सर्वनाश करने वालों में प्रथम नाम मेरा होगा लेकिन किया क्या जाए—आज मुझे चुनौती मिली है। मैं इसे स्वीकार करता हूँ।

(मानसिंह प्रस्थान करता है। महाराणा प्रताप, जगमल और इंदु उसकी तरफ़ क्रोधभरी आँखों से देखते हैं। आकाश में बिजली कौंधती है और बादल गरजते हैं।)

प्रताप : (**अट्टहास करता है।**) बिजली चमक रही है, बादल गरज रहे हैं। अब वर्षा होगी—रक्त की वर्षा होगी, जगमल, हमें मेवाड़ को आनेवाले तूफ़ान से संग्राम करने के लिए तैयार करना है। इंदु, तुम्हें भी बहुत कार्य करना है।

इंदु : मैंने अपना कार्य निश्चित कर लिया है। मैं आगरा जाऊँगी। मेरे स्वामी का विश्राम-कक्ष मेरा रण-क्षेत्र होगा।

प्रताप : पागल हो, इंदु। और पागल तो मैं भी हूँ। मेरा भी मन करता है कि छद्मवेश में जाकर समरसिंह और शक्तिसिंह के मस्तक काट लाऊँ लेकिन उससे होगा क्या ? दो-एक हत्याओं से भारत के भाग्याकाश के काले मेघ छटेंगे नहीं। भारत के स्वाभिमान और नैतिक वल को हमें वलवान बनाना है। उसके लिए एक ही उपाय है कि हम अपने सुखों की, अपने जीवन की कुर्वानी दें। भारत की स्वाधीनता के उद्यान को हरा-भरा रखने के लिए हम खाद बनकर मिट जावें ! जगमल, अव तुम देखोगे कि किसलिए प्रताप ने अपने मस्तक पर राजमुकुट धारण करना स्वीकार किया था। मुझे साधारण सैनिक की भाँति स्वाधीनता संग्राम में प्राण लुटा देने में भी संतोष प्राप्त होता—किन्तु जिस महायज्ञ को मैं प्रारंभ करना चाहता हूँ वह तो नहीं होता। हमें अपना भावी कार्यक्रम निश्चित करना है। आनेवाले संग्राम के लिए अपने देश को तैयार करना है।

जगमल : हमें सभी सामंतों को आमन्त्रित कर उनसे मन्त्रणा करनी होगी।

प्रताप : हाँ, सामन्तों से तो मन्त्रणा करनी ही होगी। मुझे विश्वास है कि हमें उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा किंतु खेद की वात है कि पिछले कुछ ही वर्षों में मेवाड़ को दो भयानक आक्रमणों का सामना करना पड़ा। पहला आक्रमण गुजरात के सुलतान द्वारा हुआ था और दूसरा सम्राट् अकबर द्वारा। इन दोनों आक्रमणों का सामना करते हुए हमारे सामन्तों के

वंश के अधिकांश युद्ध-कुशल शूरवीर वीर-गति को प्राप्त हो चुके।

इंदु : इसके अतिरिक्त वह समय था जब प्रत्येक राजस्थानी मेवाड़ की मान-रक्षा करना अपना कर्तव्य मानता था। जिस समय गुजरात के सुलतान ने चित्तौड़ गढ़ पर आक्रमण किया था उस समय बूँदी के राजकुमार अर्जुनसिंह ने अद्भुत शौर्य दिखाते हुए सहस्रों शत्रुओं को यमलोक पहुँचाते हुए अपनी हाड़ा सेना-सहित प्राणों की बलि दी थी। आज अविस्मरणीय वीर शिरोमणि पृथ्वीराज के वंशज बूँदी के महाराव अकबर के दास बन गए हैं।

जगमल : और यही हाल मारवाड़ का है। मेवाड़ियों को अपनी वीरता पर अभिमान है किंतु वीर पुरुप अन्य वीर पुरुष की प्रशंसा करने में संकोच नहीं करता। राठौर भी तलवार के धनी हैं। रणभूमि में वे साक्षात् महारुद्र का रूप धारण कर लेते हैं! चित्तौड़ पर जब अकबर ने आक्रमण किया और पिताजी संग्राम का संचालन करना छोड़ कर गढ़ से चले गये तब मारवाड़ के राठौर वीर जगमल और फत्ता ने उस विकट युद्ध का नेतृत्व स्वीकार कर मेवाड़ियों के बुझते हुए साहस के दीपक को पुनः प्रज्वलित किया था। उन्होंने मेवाड़ का मान रखने के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। अकबर भी इनके पराक्रम से विस्मित हो गया था। आज वही मारवाड़ी वे ही राठौर अकबर की ढाल बने हुए हैं। आज मेवाड़ साधनहीन, शक्तिहीन, धनहीन और साथीहीन है।

प्रताप : तो क्या हमें निराश होकर अकबर के आगे मस्तक झुका देना चाहिए ?

जगमल : नहीं दादाभाई, मैं यह तो नहीं कहता। मेरा कहना सिर्फ यह है कि कोई भी कदम उठाने के पहले हमें वास्तविक स्थिति पर पूर्ण विचार कर लेना चाहिए।

इंदु : अब युद्ध को टालना हमारे वश में तो है नहीं, जगमलजी। आकाश से बिजली टूट चुकी है और हम ठीक उसके नीचे खड़े हैं। हम उससे भाग कर नहीं जा सकते। हमें अपना वक्ष सुदृढ़ बनाना है ताकि हम पर बिजलियाँ टूटें लेकिन हम उन्हें फूल के समान झेल लें।

प्रताप : बिजली तो बिजली है, इंदु, फूल नहीं। बिजली को फूल समझने से काम नहीं चलेगा। कदाचिद् बिजली हमें जलाकर भस्म ही कर दे लेकिन हम मरेंगे तो गौरव की मृत्यु मरेंगे। हम तो केवल इतना ही संकल्प करेंगे।

इंदु : बिना यह आशा किए कि कभी हम सम्राट् अकबर का अभिमान चूर्ण करेंगे हम युद्ध किए जावें। ऐसे युद्ध से लाभ क्या है ?

प्रताप : मैं यह तो नहीं कहता इंदु कि हम बिना किसी आशा के संग्राम करने का संकल्प कर रहे हैं। मेरा कहना यह है कि परिस्थितियाँ हमारे विपरीत और सम्राट् अकबर के अनुकूल हैं। युद्ध तो हमें करना है, परिणाम चाहे कुछ भी हो। अब तो प्रत्येक मेवाड़ी

को सर पर कफ़न बाँध कर घर-द्वार की ममता त्याग, माँ पत्नी-संतान का मोह छोड़कर स्वाधीनता संग्राम के लिए अग्रसर होना है। मेवाड़ के सामन्त हमारा वल हैं, उनकी वीरता से, पराक्रम से हमारी सेना को प्रेरणा प्राप्त होती है किंतु मेरा वास्तविक वल तो मेवाड़ की प्रजा है, इंदु। मेवाड़ की प्रजा की वीरता, तप और त्याग से ही हम शत्रु के दाँत खट्टे कर सकेंगे।

जगमल : निश्चय ही दादाभाई। इस संवंध में हमारे पूर्वज हमें पथ-प्रदर्शित कर गए हैं। हमारे आदि पुरुष वाप्पा रावल के पास क्या था? उन्हें ज्ञात भी न था कि उनका जन्म, राजवंश में हुआ था। उनके जन्म के पहले ही उनका वंशानुगत राज्य आततायियों द्वारा छीना जा चुका था। उनकी माता को छोड़कर उनके कुल के सभी व्यक्ति वीर-गति पा चुके थे और उन्हें गड़रियों, भीलों और मीनाओं में अपना जीवन व्यतीत करना पड़ा था किंतु इन्हीं लोगों को संगठित कर वह मेवाड़ के महाराणा वने। विदेशी शत्रुओं के दांत खट्टे कर भारत का मुख उज्ज्वल उन्होंने किया।

प्रताप : और इसी प्रकार महाराणा हमीर ने मेवाड़ का पुनरुद्धार किया। अलाउद्दीन खिलजी ने मेवाड़ पर दो आक्रमण कर मेवाड़ का सर्वनाश ही कर डाला था। मेवाड़ में जितने भी तलवार पकड़ने की क्षमता रखने वाले योद्धा थे वे वीर-व्रत धारण कर वीर-गति पा चुके थे! हमारी वीरांगनाएँ सहस्रों की संख्या में महारानी पद्मिनी के साथ जौहर की ज्वाला में

भस्म हो चुकी थीं। संपूर्ण मेवाड़ खंडहर मात्र रह गया था। जंगल की एक झोपड़ी में पलने वाले हमीर ने मेवाड़ को पुनर्जीवित किया—मेवाड़ से विदेशियों को निष्कासित किया। आज प्रताप भी अपने पूर्वजों की गाथाओं से प्रेरित होकर मेवाड़ के मान की रक्षा करने के लिए अग्रसर हो रहा है। फिर भी हमें वास्तविकताओं से आँखें नहीं मूँद लेनी हैं। हमारे अभावों और दुर्बलताओं को दूर करने का हमें उपाय करना चाहिए। कोई यह न सोचे कि प्रताप मस्तक पर राजमुकुट धारण करने के बाद सुख की नींद सोया है। मैं सच कहता हूँ कि मैं रात में भी यही सोचता रहता हूँ कि किस प्रकार हम अपने देश की दासता की जंजीरों को काटने में सफल होंगे।

(भीलराज का प्रवेश)

भीलराज : अन्नदाता मेवाड़ाधिपति महाराणा प्रताप को अनुचर अभिवादन करता है।

प्रताप : आओ भीलराज ! मेरा संदेश आपको मिला था ?

भीलराज : तभी तो दास आपकी सेवा में उपस्थित हुआ है।

प्रताप : मुझे, नहीं नहीं, मेवाड़ को आपके सहयोग की—आपके संपूर्ण गौरवशाली समुदाय के सहयोग की आवश्यकता आ पड़ी है। बिना किसी प्रतिदान और प्रतिफल की कामना प्राणों में पाले आप लोगों ने मेवाड़ के राजवंश और मेवाड़ की प्रजा को संकट में सहारा दिया है इसके लिए हम सदा ही आप लोगों के कृतज्ञ रहेंगे।

भीलराज : (हम नीच कहाने वाले व्यक्तियों को मेवाड़ के राजवंश ने जो आदर प्रदान किया है इस बात को क्या हमारी जाति कभी भूल सकती है) प्रत्येक महाराणा का राज्याभिषेक हमारे अँगूठे के रक्त से होता है यह क्या हमारे लिए कम गौरव की बात है ? राजवंश की उदारता ने हमें अपना अनुचर बना लिया है। मेवाड़ के राजवंश के लिए हम सर्वस्व त्याग करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं।

इंदु : और मेवाड़ की प्रजा के लिए नहीं ?

भीलराज : हमारे दुखते हुए घाव को न छुओ, रानीजी ! राजवंश की बात छोड़ो। उसके साथ हमारे वंश-परंपरागत संबंध हैं—उनका एक इतिहास है। यह ठीक है कि देव-स्वरूप परम पराक्रमी स्वर्गीय बाप्पा रावल के निर्माण में उनके बाल-साथी भीलों का सहयोग महत्त्वपूर्ण रहा है लेकिन संसार में प्रायः संघर्ष में साथ देने वालों को लोग सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ चुकने पर भूल जाते हैं फिर भी उन्होंने अपने साथियों को नहीं भुलाया। इसी कारण भीलों का और सीसौदिया राज-वंश का पीढ़ियों से संबंध बना हुआ है। सर्व साधारण जन तो हमें मनुष्य की कोटि में भी नहीं मानते। हमें अपने पास बैठाने योग्य भी नहीं मानते। हमें वन्य-पशुओं की भाँति जंगलों में रहना पड़ता है।

जगमल : अपनी जन्मभूमि के प्रति क्या आपका कोई कर्तव्य नहीं है ?

भीलराज : संकट पड़ने पर जन्मभूमि हमारे कर्तव्यों की याद दिलाती है—हमारे अधिकारों के संबंध में नहीं सोचती। हमारे भाग्य में केवल त्याग लिखा है और भोग आप लोगों के हिस्से में आया है।

प्रताप : मैं मानता हूँ, भीलराज, कि भारतवासियों ने यहाँ के आदिवासियों के प्रति अन्याय किया है। आप यहाँ के मूल-निवासी हैं—यह देश हमारा बाद में है—आपका पहले, लेकिन अब पुरानी बातों को याद रखने से लाभ क्या है? जो भूलें हमारी पुरानी पीढ़ियों से हो गई हैं उन्हें अब आप लोग भूल जाओ। हमारे देश पर अब विदेशी अपना आधिपत्य जमाने में लगे हुए हैं। यदि वे पूर्णतः सफल हुए तो आप लोगों की स्थिति तो सुधरेगी नहीं हम लोगों की स्थिति भी आप लोगों से गई-बीती हो जावेगी। जो भारत का शत्रु है वह हमारा भी शत्रु है—आपका भी शत्रु है—उससे लोहा लेना हम सबका साझा कर्तव्य है।

भीलराज : मुझे नहीं मालूम कि हमारे देश पर अब और क्या नया संकट आया है।

प्रताप : संकट तो पुराना ही है, भीलराज! आप जानते हैं, भीलराज, कि मेवाड़ का कुछ भाग मुग़लों के अधिकार में है, क्या हमें इस स्थिति से समझौता कर निष्क्रिय हो जाना चाहिए।

जगमल : इसके अतिरिक्त मेवाड़ का जो वन-पार्वत्य भाग हमारे अधिकार में रह गया है उसे भी हस्तगत करने के लिए मुग़ल सेना आक्रमण करने वाली है।

इंदु : और राजस्थान के अनेक राजपूत राजा भी इस बार मुग़लों के साथ हैं।

भीलराज : इन राजाओं का अपनी जन्मभूमि के प्रति कोई कर्तव्य नहीं है ?

प्रताप : भीलराज, अधिकांश नरेश अपने पद का अर्थ ही नहीं जानते। वे राजमहलों में रहना, मदिरा पी कर या अफ़ीम खाकर बेसुध पड़े रहना, भोग-विलास में समय गँवाना और दुराचरण में व्यस्त रहना ही अपना धर्म समझते हैं। अपने इस दुराचरण की सुविधा बनाए रखने के लिए वे विदेशी सत्ता की अधीनता स्वीकार करने में ही अपना हित मानते हैं। जन्मभूमि पराधीनता के पाश में बद्ध हो रही है—देश की प्रजा विदेशी आततायियों के अत्याचार की शिकार हो रही है इसकी ओर ध्यान देने की उन्हें आवश्यकता नहीं है।

इंदु : वे गर्व करते हैं अपनी वंशगत और जातिगत वीरता की किन्तु उनकी वीरता या तो नींद लेती रहती है या जागती है तो अपने भाइयों पर प्रहार करती है। भीलराज ऐसी दुरवस्था है हमारे देश की । देश में अंधकार का साम्राज्य है, कायरता और देशद्रोही का बोलबाला है।

जगमल : इस अंधकार में—इस तूफ़ान भरी रात में मेवाड़ को मशाल लेकर आगे बढ़ना है और संपूर्ण भारत को पथ प्रदर्शित करना है। इसी उद्देश्य से मेवाड़ के महाराणा जी ने निश्चय किया कि जिस मुग़ल शक्ति के सम्मुख भारत के अधिकांश राजाओं ने

मस्तक झुका दिए हैं उसे वह चैन की नींद नहीं सोने देंगे। वह भारत को दासता से मुक्ति दिलाने के लिए संघर्ष करेंगे। हमारा महायज्ञ मेवाड़ से प्रारम्भ होगा। हमें यदि मेवाड़ को स्वतंत्र करने में सफलता मिलेगी तो भारत का मनोबल बढ़ेगा। भारतवासी सोचेंगे कि मुग़लशक्ति अजेय नहीं है। भारत दुर्बल नहीं है। स्वाधीनता-संग्राम की लपटें देश के शेष भागों में भी प्रज्वलित होंगी।

भीलराज : मेरी समझ में ये सब बातें नहीं आती हैं—लेकिन मेवाड़ के राजवंश के शत्रु को हम अपना शत्रु समझते हैं। मुग़ल सेना आवे मेवाड़ पर आक्रमण करने उन्हें लेने के देने पड़ जावेंगे। मेवाड़ के मैदानी भाग पर तो उन्होंने अधिकार कर ही लिया है अब तो युद्ध वनों और पर्वतों में होगा। ये तो हमारे गढ़ हैं। महाराणाजी, जब तक एक भी भील जीवित है आपका बाल बाँका नहीं हो सकता।

(भीलराज प्रताप के चरणों को छूता है और झुके-झुके ही अगला संवाद बोलता है।)

भीलराज : मैं आपके चरणों की शपथ खाकर कहता हूँ कि संपूर्ण भीलजाति अपना अंतिम-बिंदु भी आपके मान की रक्षा करने के लिए विसर्जित कर देगी।

(प्रताप भीलराज को उठाकर गले लगा लेते हैं।)

प्रताप : तुम देश के रक्षक हो, देश को प्राण प्रदान करने वाले हो। मेवाड़ के राजवंश की यश पताका जितनी

राजपूतों की वीरता पर आलम्बित रही है उतनी ही भीलों के बलिदान पर भी।

(चारण राव अभयदान प्रवेश करता है। प्रताप और भीलराज गले लगना बंद कर उसकी ओर देखते हैं।)

अभयदान : सूर्य-वंश-उजागर मेवाड़ाधिपति महाराणा प्रतापजी को चारण उभयदान आशीर्वाद प्रदान करता है। आपके आमंत्रण पर मेवाड़ का शुभ-चिंतक चारण अभयदान उपस्थित हुआ है।

प्रताप : आइए, आदरणीय राव अभयदान जी। आपका अनुचर प्रताप आपके चरणों में प्रणाम करता है।

(प्रताप अभयदान के चरण छूना चाहता है किंतु अभयदान उसके बढ़ते हुए हाथों को पकड़ लेता है।)

अभयदान : बस बस महाराणाजी, मैं कृतार्थ हुआ—संपूर्ण चारण समुदाय कृतार्थ हुआ। वास्तव में देखा जावे तो कहाँ एक साधारण मनुष्य, वाणी से जन साधारण तथा राजसभा का मनोरंजन करने वाला चारण और कहाँ मेवाड़ राजवंश के यशस्वी महाराणा। दोनों की क्या समता? महाराणा सूर्य हैं तो अभयदान दीपक। हमें राजवंश से जो प्रोत्साहन प्राप्त होता है उसी के संबल से तो हमारा वाणी-विलास शक्ति-संचय करता है। आप हमारे जीवन हैं, संबल हैं, प्रेरणा हैं।

प्रताप : नहीं, रावजी, सत्य ठीक इसके विपरीत है। मेवाड़ राजवंश की कीर्ति का जो गगन-चुंबी भवन खड़ा है उसके निर्माता आप जैसे वाणी के धनी हैं।

वाणी के साधक शक्ति के साधकों से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

भीलराज : यदि वे अपने गुणों का सदुपयोग करें।

जगमल : यह बात तो समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए कही जा सकती है।

इंदु : हाँ, देख लो न हम राजपूतों को। हमारे बीच संग्रामसिंह और प्रताप भी जन्म लेते हैं और मानसिंह और वह भी अब उनका क्या नाम लूँ—मेरा दुर्भाग्य है कि मैं उनकी पत्नी हूँ।

प्रताप : चिंता न करो, इंदु, संसार विषमताओं के मेल से बना है। यहाँ अंधकार भी है, प्रकाश भी।

अभयदान : प्रकाश का धर्म है कि वह अंधकार से युद्ध करे।

प्रताप : रावजी, आज प्रकाश की अपेक्षा अंधकार का प्राबल्य हो रहा है। मेवाड़ ने किसी का क्या बिगाड़ा है? उसका क्या अपराध है कि महाकाल शताब्दियों से उसके रक्त का प्यासा बना हुआ है।

भीलराज : निश्चय ही, महाराणाजी, जितने कष्ट मेवाड़ियों ने सहे हैं उतने संसार के किसी देश के वासियों ने नहीं सहे होंगे?

अभयदान : कष्ट ही तो कसौटी है मनुष्य की मनुष्यता की। जो विपत्ति में साहस नहीं छोड़ता, जो किसी प्रलोभन से सत्यपथ से नहीं भटकता वही तो सच्चा मानव है। जो स्वहित की चिंता न कर जग-हित के लिए जीता-मरता है वही तो मनुष्य है। मनुष्यता को

त्याग कर कोई हजार वर्ष भी जीवित रहे तो वह जीवन मृत्यु से निकृष्ट है। ऐसे जीवित रहने को धिक्कार है।

भीलराज : किन्तु अधिकांश लोग तप, त्याग और सत्य का दुर्गम पथ छोड़कर ऐसा मार्ग पकड़ते हैं जिसमें सुख हो, सुविधा हो।

इंदु : जिस पंथ-पर अंगारे बिछे हों उस पर चलने का साहस थोड़े लोग कर पाते हैं हमारे महाराणाजी की भाँति।

प्रताप : (मुसकुराते हुए) अब तू भी प्रशस्ति-गान करने लगी। राव अभयदान जी कहेंगे कि तू उनके क्षेत्र में अड़ंगा लगाने लगी। तुझे मेरी चापलूसी करने की क्या आवश्यकता ? प्रताप उन राजाओं में नहीं है जिन्हें अपनी उचित और अनुचित प्रशंसा सुनने में आनन्द आता है और इसी कार्य के लिए वे वेतन-भोगी मुसाहिबों की भीड़ लगाए रहते हैं।

अभयदान : किन्तु महाराणाजी मुझे यह कहने के लिए क्षमा करें कि चारण किसी की मिथ्या प्रशंसा नहीं करते वे तो दर्पण की भाँति हैं। वे वीर व्यक्तियों की प्रशंसा कर उनके यश की गाथाएँ घर-घर गा कर उनके उदाहरणों से जन-साधारण को उनके चरण-चिह्नों पर चलने की प्रेरणा देते हैं। चापलूसी और प्रशंसा में अंतर है, महाराणाजी। कोई हमें स्वर्ग के सुखों का प्रलोभन भी दे तो हम कायर और देश-द्रोहियों की प्रशंसा के गीत नहीं गावेंगे।

५

जगमल : भगवान् ने जो वाणी का वरदान आपको दिया है उसका यही सदुपयोग है।

प्रताप : रावजी, आपकी प्रतिभा का व्यापक प्रयोग करने की देश को आवश्यकता आ पड़ी है यही निवेदन करने के लिए मैंने आज आपको कष्ट दिया है।

इंदु : मैं देखती हूँ कि आज मानसिंहजी से भेंट होने के पूर्व ही महाराणाजी मेवाड़ के शत्रुओं से संग्राम करने की योजना वना चुके थे और उसे कार्य-रूप में परिणत करने के लिए भीलराजजी और राव अभयदानजी को आमंत्रित कर चुके थे।

प्रताप : नहीं तो क्या तू चाहती थी कि मैं केवल वाक्-शूर बना रहता। मुझे पता था कि मानसिंह से भेंट करने का परिणाम क्या होगा। इस परिणाम से मैं अभिज्ञ था और अपना भावी कार्यक्रम बना चुका था।

जगमल : किन्तु, क्या मैं पूछने की धृष्टता कर सकता हूँ कि क्या हम कुछ जल्दबाजी नहीं कर रहे हैं ? पहले हम अपना सैन्य-संगठन कर लेते तथा देशवासियों में आगामी संघर्ष का सामना करने का नैतिक बल उत्पन्न कर लेते।

प्रताप : तब तो चिरकाल तक हमें प्रतीक्षा करनी पड़ती। न नौ मन तेल होता न राधा नाचती ! स्वाधीनता के संग्राम इस प्रकार नहीं लड़े जाते। हमारे पास जो कुछ है उसी के सहारे हमें संघर्ष प्रारम्भ कर देना है। आवश्यकता अपनी मांग स्वयं पूरी कर लेगी।

अभयदान : निश्चय ही, महाराणाजी, असत्य के विरुद्ध, पाप के विरुद्ध, अत्याचार के विरुद्ध यदि एक भी बलवान आत्मावाला व्यक्ति अपनी आवाज़ उठाता है तो उसकी गूँज दिशा-दिशाओं में प्रतिध्वनित हो उठती है और उसका अनुसरण करने के लिए अनेक व्यक्ति आगे बढ़ने लगते हैं।

प्रताप : मेरा आपसे अनुरोध है, राव अभयदानजी; कि आप मेवाड़ के कोने-कोने में देश के शत्रुओं से लोहा लेने के लिए सर पर कफ़न बांध कर निकल पड़ने का संदेश पहुँचा दीजिए। आप सरस्वती के वरदपुत्र हैं, आपकी बाणी में मुर्दा प्राणों को भी जीवित करने की शक्ति है। हमारा मेवाड़ शत्रुओं के अनेक आक्रमणों से आहत है, सम्भव है कि फिर से यहाँ रण की ज्वाला से कुछ लोग भयभीत भी हो उठें।

भीलराज : विशेष रूप से वे जिन पर लक्ष्मी की कृपा है।

इंदु : हाँ, क्योंकि संग्राम के दिनों में उनकी सम्पत्ति सुरक्षित नहीं रहेगी।

भीलराज : हम जैसे लोग जिनका धरती बिछौना और आकाश ओढ़ना है उन्हें किस बात का भय ?

अभयदान : जिसके पास नहीं है उससे तो प्रकृति ने त्याग करा ही रखा है किन्तु जिसके पास है वह भी अपना सर्वस्व प्रदान कर दे वह व्यक्ति प्रशंसनीय है।

प्रताप : किन्तु केवल धन ही तो सम्पत्ति नहीं, राव अभयदान जी। आपके पास वाणी है यह भी सम्पत्ति है, संसार

में इसके भी ग्राहक हैं ! अकबर ने अनेक विद्वानों, कवियों और कलाकारों को खरीद रखा है ।

अभयदान : मैं तो वेमोल ही आपके हाथों बिका हुआ हूँ ।

प्रताप : राव अभयदानजी, आप बिके हुए हैं आत्मा के हाथों । प्रताप के पास इतना धन नहीं जो सत्य के साधक कवि को खरीद सके । अकबर ने संत तुलसीदासजी को अपने दरवार में बुलाया तो क्या वह गए ? स्वयं अकबर उनकी सेवा में पहुँचा। रावजी कवि का आसन सम्राट् से भी ऊपर है । अतः आपको मैं खरीद सकता हूँ ऐसा मिथ्या अभिमान मैं अपने प्राणों में नहीं पाल सकता ।

अभयदान : महाराणाजी, आप महान हैं । अप्रतिम हैं, अदभुत हैं ।

प्रताप : नहीं रावजी, मैं साधारण व्यक्ति हूँ किन्तु मेरे प्राणों में एक ज्वाला भड़क रही है । मेवाड़ का राजवंश और मेवाड़ की प्रजा दोनों भारत की स्वाधीनता के लिए सदियों से संग्राम करते आए हैं । आप जेसे सरस्वती के वरद-पुत्रों ने जो वीर-गाथाएँ लिखी हैं उन्हीं से मैंने जाना कि हमारे आदि पुरुष बाप्पा रावल ने अरब से आने वाले विदेशियों के बढ़ते हुए कदमों को रोका था । प्रसिद्ध पराक्रमी सम्राट पृथ्वीराज चौहान के साथ हमारे पूर्वज समरसिंहजी मोहम्मद गोरी से लोहा लेने में सबसे आगे थे । बावर के मार्ग को अवरुद्ध करने का प्रयास हमारे दादाजी श्री संग्रामसिंह जी ने किया था । मुझे तो अपने पूर्वजों का अनुगमन करना है ।

अभयदान : भगवान् आपको यशस्वी करे।

प्रताप : रावजी, आपकी वाणी में भविष्य बोलता है क्योंकि कवि की जिह्वा पर सरस्वती का वास है। आपने मुझे यशस्वी होने का आशीर्वाद प्रदान किया, विजयी होने का नहीं।

अभयदान : महाराणाजी ! सत्य के पथ पर आरूढ़ रहकर सर्वस्व बलिदान करना, प्राण देना लेकिन प्रण पर अटल रहना ही मानव-जीवन की सफलता है। कम से कम इतनी सफलता तो आपको—आपको क्यों कहूँ, कहना चाहिए हमको अवश्य प्राप्त होगा। इस संग्राम में सम्पूर्ण मेवाड़ आपके साथ होगा।

भीलराज : जहाँ आपका पसीना बहेगा वहाँ हम अपना रक्त बहायेंगे।

इंदु : अपना ही या शत्रुओं का भी।

भीलराज : शत्रुओं का पहले।

इंदु : तो मुझे सन्तोष हुआ। मैं चाहती हूँ राव अभयदान कि आप अपनी वाणी का चमत्कार दिखावें और मेवाड़ के प्रत्येक व्यक्ति को समरभूमि में शत्रु का रक्त पीने के लिए लालायित करें। बहुत रक्त पिया है मेवाड़ की भूमि ने। मेवाड़ की चप्पा-चप्पा भूमि रक्त पी चुकी है फिर भी प्यासी है। इसे और रक्त पिलाना है। स्वाधीनता की देवी रक्त की प्यासी रहती है। जो देश उसे रक्त पिलाना बंद कर देता है वह दुर्बल और पराधीन हो जाता है।

प्रताप : देखता हूँ कि तेरी जिह्वा पर भी सरस्वती आ विराजी है। तेरी वाणी में कविता सा ओज आ गया है।

इंदु : महाराणाजी, व्यथा मनुष्य को पागल, शराबी या कवि वना देती है।

जगमल : (किंचित हँसी के साथ) और इन तीनों में विशेष अंतर भी नहीं है।

इंदु : यह हँसने की वात नहीं है, जगमलजी। मेरे प्राणों की व्यथा को तुम अनुभव नहीं कर सकते क्योंकि नारी नहीं हो। एक नारी के जीवन में पति का क्या स्थान है यह तुम नहीं समझ पाओगे। इस बात की कल्पना करो कि अकवर की सेना में वे घोड़े पर सवार होकर युद्ध करने आवेंगे और मेवाड़ की ओर से मैं। तव क्या होगा ? यह धरती डोल नहीं उठेगी ?

अभयदान : नहीं, देवि, धरती डोलेगी नहीं, अपनी वेटी के साहस को आशीर्वाद देगी। आकाश पुष्प-वर्षा करेगा। तुम्हारे जैसी देवियाँ संसार के सम्मुख नया आदर्श उपस्थित करेंगी।

प्रताप : (जगमल से) भैया, मैंने रावजी के लिए सिरोपाव लाकर रखा है। मेरे डेरे में है। तुम परिचारिका से उठवा कर ले आओ। हाँ, एक चौकी भी लिवा लाना। उस पर आसीन कर हम इन्हें सम्मान सिरोपाव भेंट करेंगे। हाँ, तिलक का सामान भी

लाना। भीलराजजी को भेंट करने के लिए एक तलवार भी लाना।

(जगमल का प्रस्थान)

प्रताप : (अभयदान से) रावजी, मेरे यज्ञ की सफलता बहुत कुछ आपके ऊपर निर्भर है। इस समय मेरे पास मेरे संकल्प के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है और अकबर के पास न धन का अभाव है, न शस्त्रों का, न सेना का। बिना इन साधनों के क्या संग्राम लड़ा जा सकता है? मेवाड़ सब तरह गरीब हो चुका है फिर भी हमें तिनका-तिनका मिलाकर मजबूत रस्सा बनाना है। यह कार्य आपको करना है। मेवाड़ का बहुत बड़ा भाग अकबर के अधीन है। वहाँ के निवासियों को अपने घरद्वार छोड़कर हमारे साथ जंगलों में बास करने को तैयार करना होगा। जितना मेवाड़ पराधीन है उसे श्मशान की भाँति उजाड़ कर देना है। अकबर समझ ले कि मेवाड़ की भूमि वह जीत सकता है—मेवाड़ का हृदय नहीं। पहला कदम हमारा यही होगा।

(जगमल और परिचारिका का प्रवेश। जगमल के हाथ में भीलराज को प्रदान करने के लिए तलवार है। परिचारिका के एक हाथ में चौकी है और एक में सिरोपाव। प्रताप परिचारिका से लेकर चौकी बिछाता है।)

प्रताप : (अभयदान से) विराजिए रावजी।

(अभयदान चौकी पर बैठता है। प्रताप अपनी तलवार से अपने अँगूठे में से रक्त निकालते हैं।)

प्रताप : क्षमा कीजिए, रावजी। आज रोली से नहीं अपने रक्त से मैं आपका तिलक कर रहा हूँ।

(प्रताप अभयदान का तिलक करके उन्हें सिरोपाव भेंट करता है। अभयदान सिरोपाव ग्रहण करने के पश्चात उठता है। परिचारिका चौकी उठाकर प्रस्थान करती है।)

अभयदान : जब तक सूर्य-चंद आकाश में प्रकाशित हैं तब तक मेवाड़ के महाराणा का यश उजागर रहे यही अभयदान का आशीर्वाद।

प्रताप : धन्यवाद, रावजी; किंतु प्रताप को यश की भी कामना नहीं है। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य अपने देश को विदेशियों की पराधीनता से मुक्ति दिलाने के लिए संघर्ष करना है। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वह अपने सारे सुखों को तिलांजलि देने का संकल्प कर चुका है।

जगमल : आपको ज्ञात ही होगा कि महाराणाजी ने निश्चय किया है कि राजमहलों के सारे सुखों का वह त्याग करेंगे। पत्तलों पर साधारण भोजन ग्रहण करेंगे, भूमि पर फूस बिछाकर शयन करेंगे।

प्रताप : मैंने वेश बदल कर मेवाड़ के उस भाग में पर्यटन किया है, रावजी, जिस पर विदेशियों का अधिकार हो चुका है। अपनी शस्य श्यामला भूमि पर अभावों ने डेरा डाल रखा है। प्रजा को भर-पेट भोजन भी प्राप्त नहीं होता, नारियों को अपनी लाज की रक्षा करने के लिए उपयुक्त वस्त्र भी प्राप्त नहीं होते। ऐसी

स्थिति में क्या मुझे राज-सुख का उपयोग करने का अधिकार है ?

इंदु : और अभागी प्रजा अपने दु:खों का रोना किसके आगे रोवे ? विदेशी अधिकारियों तथा विदेशियों द्वारा खरीदे हुए देशद्रोही देशी सामंत प्रजा का रक्त चूसना ही अपना कर्तव्य समझते हैं। जिसे भी चाहते हैं उसे वेगार करने के लिए पकड़ लेते हैं। जोर जवर्दस्ती से ग्राम-वासियों को अपनी सेना में नौकरी करने को वाध्य करते हैं। इस प्रकार उन्हें अपने ही देश के विरुद्ध तलवार चलाने को बाध्य किया जाता है। जव कोई मुगल अधिकारी नगरों, कस्बों या ग्रामों में होकर जाता है तो वहाँ के निवासियों को उनके मार्ग में पंक्ति बाँध कर खड़ा होना पड़ता है और सर झुका कर उनकी अभ्यर्थना करती पड़ती है। पद-पद पर प्रजा-जन का अपमान किया जाता है।

अभयदान : निश्चय ही पराधीनता से बड़ा अभिशाप संसार में दूसरा नहीं। मेरा तो कार्य ही नगर-नगर, ग्राम-ग्राम घूमना है। मैं भली भाँति जानता हूँ कि मेवाड़ का हृदय भीतर हो भीतर बंद ज्वालामुखी की भाँति धधक रहा है। किसी भी क्षण यहाँ विस्फोट हो सकता है।

प्रताप : विस्फोट तो होगा, रावजी। किंतु मैं अनियमित विस्फोट नहीं चाहता। विश्रृंखल संघर्ष से मेवाड़ का कुछ भी हित नहीं होगा। ऐसा विस्फोट स्वयं अपने के लिए घातक हो सकता है।

इंदु : किंतु क्या मेवाड़ की प्रजा के अंत:करण में विदेशी

शासन के प्रति जो क्रोध है उसे आप नियंत्रित कर पावेंगे ?

भीलराज : मेवाड़ मुगलों से प्रतिशोध लेने के लिए व्याकुल है।

प्रताप : मेवाड़ के प्राणों में जो ज्वाला सुलग रही है उसे मार्ग मिलना चाहिए। मार्ग नहीं मिलेगा तो विस्फोट होगा जो आत्मघातक होगा। यदि विस्फोट नहीं हुआ तो सारी प्रजा पतन के पथ की अनुगामिनी होगी। वे अपमान को निर्विरोध सहेंगे और भारत से अन्य राज्यों को पराधीनता के पाश नें बाँधने में शत्रु के सहयोगी होंगे। बैलों की भाँति पराधीनता के जुए को कंधों पर लादे हुए जिएँगे। पतन की यह पराकाष्ठा है।

भीलराज : जिस प्रकार राजस्थान के अन्य राज्यों अंबर, मारवाड़ और हाड़ौती में हुआ है।

अभयदान : किंतु मेवाड़ का ऐसा पतन कभी नहीं होगा। सूर्य को भी ग्रहण लगता है। अतः यह बात दूसरी है कि कुछ समय के लिए परिस्थितिवश हमें गतिहीन रहना पड़े किंतु यह निर्विवाद है कि हम दासता की वेड़ियों को काटने के लिए सदा व्याकुल रहेंगे, जिस व्यक्ति को स्वाधीनता और स्वाभिमान से प्रेम नहीं है वह जीते जी ही शव के समान है। मेवाड़ मुर्दा नहीं है।

इंदु : मेवाड़ मुर्दा नहीं है और शेष भारत भी सर्वथा-स्पंदनहीन है यह वात भी नहीं, लेकिन पथ-भ्रष्ट अवश्य है। उसे ठीक रास्ते पर लाने की आवश्यकता है। आज हम मातृ-भूमि के सम्मान को भूल गए हैं।

हमसे मेरा तात्पर्य है अधिकांश देशवासी। हमें स्वाधीनता से वास्तविक प्रेम होता—अटूट प्रेम होता तो क्या एक क्षण भी हम विदेशी शासन को सहन करते? हम अपनें हाथ से अपने घरों में आग लगा देते। नगर ग्राम-कस्वे सब को छोड़कर जंगलों में जा बसते। भूख-प्यास सहते-मर मिटते लेकिन विदेशियों का शासन स्वीकार नहीं करते।

प्रताप : तुम ठीक कह रही हो, इंदु। मेवाड़ को शेष भारत को मार्ग दिखाना होगा। मैं मेवाड़वासियों के देश-प्रेम की परीक्षा लेना चाहता हूँ, जगमल। हमें मेवाड़ के मुग़ल-अधिकृत प्रदेश में घोषणा करनी है कि जिस मेवाड़वासी को अपने देश से प्रेम है वह घर-द्वार छोड़कर पहाड़ों और जंगलों में आ वसे। मेवाड़ का मुग़ल-अधिकृत भाग एक विस्तृत श्मशान बन जावे। सैन्य-शक्ति से कोई विदेशी भूमि को जीत सकता है, वहाँ के निवासियों का हृदय नहीं।

अभयदान : आपकी आज्ञा को हमारा चारण-दल मेवाड़ के प्रत्येक कोने में पहुँचा देगा।

इंदु : और जो महाराणाजी की इस घोषणा के विपरीत कार्य करेगा—उसका घर-द्वार जला डाला जावेगा और उसे प्राण-दंड दिया जावेगा।

जगमल : हमें देखना है कि मेवाड़वासी विदेशी शासन में रहने का निर्लज्जतापूर्ण दुस्साहस करते हैं या मेवाड़ के महाराणा के प्रति निष्ठा का प्रमाण देते हैं।

अभयदान : मैं मेवाड़ की प्रजा के प्रतिनिधि के रूप में विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि महाराणाजी के आदेश पर

प्रत्येक मेवाड़ी ज्वालामुखी के मुँह में भी कूदने के लिए प्रस्तुत रहेगा।

भीलराज : मैं मेवाड़ के संपूर्ण आदिवासी समुदाय की ओर से निवेदन करता हूँ कि हमारे जीवन मेवाड़ के हैं। हम अपने देश के लिए ही जन्मे हैं और उसी के लिए मरेंगे।

प्रताप : आप लोगों के निश्चय से मैं धन्य हुआ। मेवाड़ निवासियों का स्नेह ही तो मेरा बल है, रावजी, जिसके सहारे मैं विदेशियों की अपरिमित शक्ति से लोहा लेने को प्रस्तुत हुआ हूँ। हमें विदेशियों से जो युद्ध करना है उसमें मेवाड़ के योद्धा तो भाग लेंगे ही लेकिन अन्य प्रजाजन को भी इसमें साथ देना होगा। हमें संपूर्ण प्रजाजन का सहयोग वांछनीय है। मेवाड़ के मुग़ल-अधिकृत प्रदेश से प्रत्येक मेवाड़ी प्रस्थान करके वन-पार्वत्य प्रदेश में आ जावें इतना ही पर्याप्त नहीं होगा। हमारा यत्न यही होना चाहिए कि मुग़ल-अधिकृत मेवाड़ को पूर्ण रूप से उजाड़ दिया जावे।

जगमल : अपने ही प्रदेश को हम······

प्रताप : हाँ, जगमल, हमें अपने ही प्रदेश को उजाड़ देना है। वहाँ के प्रत्येक कुएँ में विष डाल देना है। खड़ी खेतियों को पकने के पहले ही काट डालना है। प्रत्येक सरोवर के पानी को पीने के अयोग्य बना डालना है। शत्रु-पक्ष को हमारे प्रदेश में जिस पर उसने बलपूर्वक अधिकार किया है न तो पीने को पानी मिले, न खाने को अन्न का एक दाना।

(भामाशाह का प्रवेश। भामाशाह मेवाड़ी व्यापारी की पोशाक में है लेकिन तलवार बाँधे हुए है।)

भामाशाह : मेवाड़ के महाराणा को अनुचर भामाशाह नमस्कार करता है।

प्रताप : आइए दीवान भामाशाहजी मैं मन में आपको ही याद कर रहा था।

भामाशाह : आज्ञा कीजिए, सेवक को किस लिए याद किया जा रहा था।

प्रताप : आपको ज्ञात हो गया होगा कि आज अंबर के मानसिंह...

भामाशाह : हाँ, हाँ महाराणाजी, वह सब मैं सुन चुका हूँ। स्वयं मानसिंहजी ने मुझसे इसकी चर्चा की है।

इंदु : मानसिंहजी ने ? आश्चर्य ? वह आपको कहाँ मिल गए ?

भामाशाह : मिल नहीं गए—उन्होंने स्वयं मुझे बुलवाया।

जगमल : आश्चर्य ?

भामाशाह : इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? चतुर शत्रु विपक्षी दल के अधिक से अधिक लोगों का सहयोग प्राप्त करने का यत्न करता है।

अभयदान : अर्थात् अधिक संख्या में देशद्रोहियों का सृजन करना चाहता है।

भामाशाह : निश्चय ही। घर का भेदी लंका ढहावे। शत्रु-पक्ष में फूट डालना रण-नीति का सबसे प्रबल शस्त्र है।

शक्तिसिंहजी को वह महाराणा के मस्तक का ग्राहक बना ही चुके हैं और उन्हें मेवाड़ के राज-सिंहासन का स्वामी बना देने का बचन दे ही चुके हैं।

इंदु : और आपको ?

भामाशाह : मुझे मेवाड़ के महामंत्री पद का प्रलोभन दिया है—

जगमल : वह तो आप हैं ही।

भामाशाह : किंतु जिस मेवाड़ का महामंत्री मैं हूँ उसके महाराणा नाम मात्र के राजा हैं। आधे से अधिक भूमि विदेशियों के अधिकार में है और शेष भी उनके अधिकार में नहीं रहेगी—तब देश में न महाराणा को स्थान मिलेगा न उनके महामंत्री को। दोनों के मस्तकों पर शत्रु की तलवार टँगी रहेगी। कब यह जीवन-लीला समाप्त हो जावे इसका कुछ भी पता नहीं और अकबर के दरबार में जाने पर पौ बारह हैं। ऐसा स्वर्णावसर फिर कब मिलने वाला है ?

अभयदान : तब आपने क्या निश्चय किया ?

भामाशाह : क्या करता ? बनिया ठहरा—व्यापारी। मैं तो लाभ-हानि का हिसाब लगाकर ही निश्चय कर सकता हूँ। कौन मुझे अधिक दे सकता है ?

प्रताप : देने के लिए मेरे पास क्या है ? भामाशाहजी। वैसे भी मेवाड़ के महाराणा के पास तो कुछ होता नहीं। वह राजा होकर भी रंक रहता है क्योंकि हमारे आदि पुरुष बाप्पा रावल ने राज्य तो भगवान् एकलिंगजी को समर्पित कर दिया था—सारी भूमि,

संपूर्ण सम्पत्ति, अधिकार एकलिंगजी के हैं। महाराणा तो उनका दीवान हैं। और अब तो शत्रु ने उसे सब तरह से रंक बना दिया है।

भामाशाह : रंक महाराणा का दीवान भी रंक रहेगा। ऐसा सौदा तो मँहगा पड़ेगा भामाशाह को। मैं इसे स्वीकार नहीं करूँगा।

इंदु : (तलवार तानती है।) तो तुम भी देश-द्रोह करोगे। जानते हो, भामाशाह कि मैंने देश-द्रोहियों के मस्तक काटने के लिए रण-चंडी का रूप धारण किया है।

(इंदु तलवार का प्रहार भामाशाह पर करती है लेकिन प्रताप फुर्ती से उसका वार अपनी तलवार पर रोक लेता है। भामाशाह हँसता है।)

भामाशाह : महारानीजी, दिमाग में अधिक गर्मी रखने से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक है आपने नारी होकर भी तलवार थामी है इसका अर्थ यह नहीं कि आप चाहे जिसका मस्तक काटती फिरें। आज आपने मेरे ऊपर तलवार तानी है, कल अपने पति पर तानोगी, परसों महाराणाजी पर। उसके बाद स्वयं अपने ऊपर और वह तो साफ बच जावेगा जिसके लिए यह तलवार बनी है।

इंदु : किंतु तुम कहते हो रंक महाराणा के रंक महामंत्री पद को तुम स्वीकार नहीं करोगे।

भामाशाह : वह तो मैं अब भी कहता हूँ लेकिन महाराणा रंक नहीं हैं।

प्रताप : रंक नहीं हूँ ? मेवाड़ का संपूर्ण राज-कोष तो आपके हाथ में है। आपको विदित है कि अव हमारे पास है ही क्या ?

भामाशाह : मेरे पास आपके कोष को रखने योग्य स्थान ही कहाँ है, महाराणाजी। आपका कोष मेवाड़ की प्रत्येक झोपड़ी और प्रत्येक हवेली में है। राज-कोष का अंत हो सकता है लेकिन प्रजा के विश्वास के कोष पर जिसका आधिपत्य है उसका कोष कैसे रिक्त होगा ? भामाशाह को प्रजाजन के अंतर प्रदेश का पाई-पाई हिसाब ज्ञात है। समुद्र का जल समाप्त हो जावेगा लेकिन मेवाड़ को शत्रु से संग्राम करने के लिए न धन का अभाव रहेगा न जन का। मुगल आवें मुगलों के हिमायती आवें। मेवाड़ युद्ध-भूमि में उनको लोहे के चने चबवावेगा।

(भामाशाह तलवार निकालता है।)

भामाशाह : महाराणाजी, भामाशाह भी रण-भूमि में आपके साथ होगा। अभयदानजी, आप आशीर्वाद दीजिए कि भामाशाह अपने देश के लिए सर्वस्व अर्पण करने में कभी संकोच न करे।

(भामाशाह अभयदान के चरण छूता है।)

अभयदान : दीवानजी, आपके उदाहरण से भारत की पीढ़ियाँ प्रेरणा पावेंगी। जिस देश में भामाशाह से व्यापारी और राजपदाधिकारी हैं महाराणा प्रताप से शासक

और इंदु जैसी नारियाँ हैं वह अजेय है। वह अजेय रहेगा।

प्रताप : मैं भीलराजजी को तलवार प्रदान करना तो भूल ही गया।

(प्रताप जगमल से तलवार लेकर भीलराज को देता है। भीलराज तलवार को मस्तक से लगाता है।)

(पटाक्षेप)
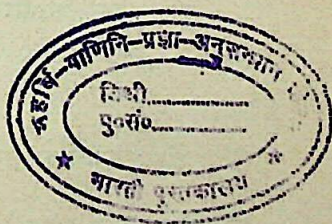
तीसरा अंक

पहला दृश्य

(स्थान—रणभूमि में एक एकांत स्थान। समय—दिन शक्तिसिंह रण-सज्जा में सज्जित एकाकी खड़ा है। नेपथ्य में तोपों के चलने का गर्जन, बंदूकों के चलने के धमाके, तलवारों के परस्पर टकराने की ध्वनियाँ, घोड़ों की हिनहिनाहटें, हाथियों की चिंघाड़ें और सेना के कोलाहल का शोर सुनाई देता है। अल्ला हो अकबर, शाहंशाहे हिंद अकबर जिंदाबाद तथा जय एकलिंग, मेवाड़ की जय, महाराणा प्रताप की जय के नाद भी सुनाई देते हैं। राजपूत सैनिक के वेश में इंदु प्रवेश करती है। उसने पुरुष-वेश धारण कर रखा है। नकली दाढ़ी मूँछें लगा रखी हैं और सर से बालों को छुपाने के लिए साफ़ा पहन रखा है।)

इंदु : मेवाड़ के भावी महाराणा को नमस्कार।

शक्तिसिंह : (चौंक कर) कौन ?

इंदु : चौंक क्यों उठे ? जैसे कोई अपराध करते हुए रंगे हाथों पकड़े गए हैं आप।

शक्तिसिंह : नहीं, नहीं, ऐसी बात नहीं है, सैनिक ! किंतु तुम कौन हो ?

इंदु : कौन हूँ—मनुष्य हूँ, जानवर तो नहीं।

शक्तिसिंह : जानवर मनुष्य से कहीं श्रेष्ठ होता है। उसे मनुष्य की भाँति सोचने का रोग नहीं होता। मनुष्य सोच सकता है इसलिए वह स्वार्थी बनता है और स्वार्थ-साधन के उपाय करता है, भाँति-भाँति के साधन जुटाता है और दूसरों पर अत्याचार करता है।

इंदु : तो आप समझते हैं कि मनुष्य भी पशु बन जावे तब संसार से लोभ, स्वार्थ और अत्याचार समाप्त हो जावेंगे।

शक्तिसिंह : मनुष्य भी तो एक पशु ही है। अंतर यही है कि उसके सर पर सींग नहीं होते।

इंदु : सींग तो गधे के भी नहीं होते। तो क्या मनुष्य गर्दभ की जाति का पशु है।

शक्तिसिंह : सींग तो सिंह के भी नहीं होते, तो क्या कहना चाहिए कि मनुष्य सिंह की जाति का पशु है।

इंदु : नहीं, वह श्वान की जाति का जानवर है। अपनी जाति का शत्रु और जो उसे टुकड़े डाले उसका आज्ञाकारी। स्वजनों के प्राण लेने को और स्वामी के लिए प्राणार्पण करने को प्रस्तुत।

शक्तिसिंह : सैनिक, तुम मुझपर व्यंग करते हो ?

इंदु : (हँसती है) हः हः हः। चोर की दाढ़ी में तिनका।

शक्तिसिंह : तुम मेरे क्रोध से अपरिचित हो तभी मेरा अपमान करने का साहस कर रहे हो।

इंदु : मैं आपकी रग-रग से परिचित हूँ, सम्राट् अकबर के अनेक सेनापतियों में से एक।

शक्तिसिंह : तुम हो कौन ? तुम्हारे ऊपर तलवार चलाने में मुझे संकोच क्यों हो रहा है। तुम्हारी आँखों में न जाने क्या आकर्षण है ? जैसे तुम्हें कहीं देखा है। तुम जब हँसे तो जान पड़ा कि यह हँसी मैंने कहीं सुनी है।

इंदु : अवश्य सुनी होगी। यह हँसी तो उस दिन प्रारंभ हुई थी जब आपने महाराणा प्रताप पर तलवार उठाई थी। इस हँसी ने तब और भी उग्र रूप धारण किया जब आपने सम्राट् अकबर की राज-सभा में उपस्थित होकर सिंहासन के सम्मुख मस्तक नत किया और इसके बाद यह और भी प्रचंड हो उठी जब आप सम्राट् की सेना के एक सेनापति बनकर मेवाड़ की स्वाधीनता को ग्रसने यहाँ आए।

शक्तिसिंह : तुम किस सेना के सैनिक हो ?

इंदु : (रुक जाती है, फिर एक क्षण बाद) मैं राजपूत सेना का सैनिक हूँ।

शक्तिसिंह : इस उत्तर से तो कुछ भी स्पष्ट नहीं हुआ। राजपूत सेना तो दोनों तरफ़ है। मुग़लों की तरफ़ भी और मेवाड़ की तरफ़ भी।

इंदु : मैंने महाराज मानसिंह की सेना में चाकरी कर ली है, नहीं तो यहाँ आपके दर्शन करने का सौभाग्य कैसे प्राप्त होता ?

शक्तिसिंह : तो तुमने केवल मेरे दर्शन करने की लालसा से महाराज मानसिंह की सेना में नौकरी की है ? ऐसा

मुझमें क्या है जो मेरे दर्शन करने कीं तुम्हारे हृदय में लालसा जाग्रत हुई।

इंदु : सुना था कि आप अत्यंत शक्तिशाली और निर्भीक योद्धा हैं। महाराणा प्रताप के समकक्ष यदि कोई पराक्रमी है तो आप ही हैं। सम्राट् अकवर को आपसे वहुत आशाएँ हैं और यदि वास्तव में आज के युद्ध में आपके पराक्रम से मुग़लों को विजयीश्री प्राप्त हुई तो संभव है सम्राट् मानसिंहजी की अपेक्षा भी आपको उच्चपद प्रदान करें! ऐसे महापुरुष के दर्शन करने की लालसा किसे नहीं होगी ?

शक्तिसिंह : तुम मुझे मूर्ख बनाने का यत्न कर रहे हो।

इंदु : मैं आपको क्या बनाऊँगा। आपको भगवान् ने जो कुछ वनाया है उससे अधिक कोई नहीं बना सकता। लीलामय भगवान् को मज़ाक़ सूझता रहता है! वह परम पराक्रमी महाराणा संग्रामसिंह के पुत्र उदयसिंह को कायर वना देता है। वह उदयसिंह जी के एक पुत्र को महाराणा प्रताप बनाता है और दूसरे को अब उसका क्या नाम लूँ—आप सामने उपस्थित ही हैं। एक अपने देश की स्वाधीनता की रक्षा के लिए प्राणों को हथेली पर रखकर रुद्ररूप धारण कर शत्रु-सेना का संहार कर रहा है और दूसरा अपने देश को पराधीनता की वेड़ियों में कसने के लिए प्राणपण से प्रयत्नशोल है। यह विघाता की दिल्लगी है न ?

शक्तिसिंह : तुम साधारण सैनिक नहीं हो। जान पड़ता है कि तुम प्रताप के गुप्तचर हो और हमारी सेना में नौकरी कर हमारे रहस्य लेने आये हो।

इंदु : अब रहस्य जानने और उसका उपयोग करने का अवसर ही कहाँ है, वीरवर ! दोनों सेनाएँ भिड़ी हुई हैं। एक तरफ मुग़लों का एक लाख का सैन्य दल है—दूसरी तरफ़ पच्चीस हज़ार मेवाड़ी और भीलों की सेना। आप, मानसिंह, रहीम खानखाना, शाहज़ादा सलीम जैसे कुशल सेनापति मुगलों की सेना का संचालन कर रहे हैं। आपके पास तोपें हैं—मेवाड़ियों के पास केवल तलवारें हैं, बल्लमें हैं—भीलों के पास तीर-कमान है। फिर भी शाही सेना में महाराणा ने तहलका मचा रखा है।

शक्तिसिंह : हमारे सैनिक होकर तुम शत्रु की प्रशंसा कर रहे हो ?

इंदु : प्रशंसा नहीं कर रहा—मैं तो वस्तु-स्थिति का वर्णन कर रहा हूँ। मैंने रणभूमि में जो कुछ देखा उससे चकित हो गया। महाराणा मुगल सेना में जिधर जाते हैं—काई सी फट जाती है। वह अपने चेतक घोड़े पर बैठे हुए एक हाथ से तलवार और एक से बल्लम का संचालन करते हुए—मुँह से लगाम थामे शत्रु-दल का संहार कर रहे हैं। किंतु जान पड़ता है इससे उन्हें सन्तोष नहीं है। वह तो खोज रहे हैं—मानसिंह को और सलीम को।

शक्तिसिंह : मुझे नहीं ?

इंदु : यह मैं क्या जानूँ ? मैंने तो केवल अनुमान लगाया है। संभवत: उनके हृदय में अपने अनुज के प्रति अब भी ममता हो किन्तु वह संग्राम करने के लिए किसी अपनी बराबरी के व्यक्ति को खोज रहे हैं। सलीम

और मानसिंह अपनी सेना के ठीक मध्य में हाथियों पर आसीन हैं। उनके पास पहुँचना क्या सरल है? सेनाओं की एक के बाद एक अनेक प्राचीरों को काट-कर वहाँ तक पहुँचा जा सकता है किन्तु महाराणा तीर की भाँति मुग़ल-सेना को वेधते हुए अग्रसर हो रहे हैं। मैंने तो ऐसे जीवन का आदमी आज तक नहीं देखा।

शक्तिसिंह : (कुछ चिंतायुक्त स्वर में) मुझे भय है कि आज प्रताप के प्राणों की रक्षा नहीं हो सकेगी।

इंदु : आपको इसकी चिन्ता क्या? आपको तो प्रसन्न होना चाहिए। जिस भाई ने आपको निर्वासित कर दिया उसके प्राणों की चिन्ता आपको किस लिए? महाराणा प्रताप का जीवित रहना आपके लिए तो घातक है। जब तक उनके शरीर में एक भी सांस शेष है वह मेवाड़ के लिए युद्ध करेंगे—और आपको मेवाड़ के सिंहासन पर आसीन नहीं होने देंगे।

शक्तिसिंह : तो क्या तुम समझते हो कि मेवाड़ की राजगद्दी पर आसीन होने की वहुत लालसा है मुझे?

इंदु : नहीं तो आप किसलिए सम्राट् की शरण में आये हो?

शक्तिसिंह : क्या कहा, शरण में आया हूँ। शक्तिसिंह इतना पतित नहीं हुआ कि किसी की शरण में जावे। उसकी वाहुओं में अपना भाग्य बनाने की शक्ति है। मानसिंह के वाग्जाल में फँसकर मैं सम्राट् अकबर की राजसभा में जा पहुँचा था। किंतु...

इंदु : अब संभवतः आपको अपने किए पर पश्चाताप हो रहा है। अब संभवतः जन्मभूमि के प्रति अपने कर्तव्य की भावना आपके हृदय में प्रबल हो उठी है। तभी आप रणभूमि में सेना का संचालन न कर यहाँ तटस्थ खड़े हैं।

शक्तिसिंह : नहीं, नहीं, राजपूत विश्वासघात नहीं करता। बीच युद्ध में शक्तिसिंह पक्ष-परिवर्तन नहीं करेगा, न तटस्थ ही रहेगा किंतु अभी मुझे अपनी शक्ति लगाने की विशेष आवश्यकता नहीं जान पड़ती। मेरी अभिलाषा तो यह थी कि प्रताप से युद्ध करने के लिए मानसिंह आते, सलीम भी न आते, खानखाना भी न आते। मुझे ही प्रधान सेनापति बनाकर भेजा जाता। इतनी सेना भी मुझे न दी जाती। यही पन्द्रह या बीस हजार सैनिक मेरे साथ होते। तोपें भी न होतीं। तब प्रताप से मेरा बराबरी का युद्ध होता। प्रताप के प्राण भी मैं न लेता केवल एक बार उन्हें रणक्षेत्र में परास्त करके संतोष कर लेता। मुझे मेवाड़ की राजगद्दी से क्या लेना देना है ?

इंदु : विचित्र व्यक्ति हैं आप ?

शक्तिसिंह : मैं क्या हूँ ? इसे मैं स्वयं नहीं समझा पा रहा। एक चलता-फिरता ज्वालामुखी ही न ? अपने अस्तित्व से मैं चतुर्दिक ज्वाला ही भड़का रहा हूँ। निर्माण मेरा कार्य नहीं—विध्वंस मेरा स्वभाव है। ऐसा क्यों है—मैं समझ नहीं पाता।

इंदु : इसलिए कि आपकी धारणा है कि आपको प्रेम और आदर प्राप्त नहीं हुआ। आपकी प्रतिभा का किसी ने सम्मान नहीं किया और अब आप तलवार की नोक से रक्त के अक्षरों में अपनी प्रतिभा की गौरव-गाथा जन-मानस में लिख देना चाहते हैं। यहाँ तक तो किसी सीमा तक ठीक है किन्तु आपने मार्ग सही नहीं पकड़ा। आपकी तलवार की सम्राट् अकबर को कोई आवश्यकता नहीं है। उसके पास तलवारों का कोई अभाव नहीं है। उसकी असंख्य तलवारों में एक शक्तिसिंह की भी तलवार है। उसके हृदय में सच पूछो तो आपकी अपेक्षा अधिक सम्मान है प्रताप का।

शक्तिसिंह : नहीं-नहीं।

इंदु : नहीं, नहीं क्या? प्रताप उनके आगे मस्तक झुकावे यह उसकी कामना है, सबसे बड़ी आकांक्षा है। क्यों—इसलिए कि जिन राजाओं ने आज तक उसके आगे मस्तक झुकाया है, उन्हें वह महत्व नहीं देता। जो व्यक्ति अपने देश के सम्मान के लिए बलिदान करने को प्रस्तुत रहता है उसे शत्रु भी सम्मान की दृष्टि से देखता है। आपको राजगद्दी नहीं चाहिए केवल सम्मान चाहिए। वह भी तो आप नहीं पा सके, न पा सकेंगे? यहाँ भी आप प्रताप से हार गए।

शक्तिसिंह : हाँ, हार गया। तब तो मेरे सामने पिशाच होने के अतिरिक्त और कोई मार्ग ही नहीं है। अब मुझे

पिशाच ही होना पड़ेगा। मैं आज ही प्रताप से फैसला कर लूँगा।

(शक्तिसिंह म्यान से तलवार निकालता है।)

शक्तिसिंह : किसलिए इतने प्राण लिए जा रहे हैं जब कि मानसिंह अकेला ही इस संग्राम का परिणाम निकाल सकता है। वीर, तुमने मेरे हृदय को झकझोर डाला है। शक्तिसिंह को प्रेम नहीं मिला—सम्मान भी नहीं मिलेगा—तब किसलिए उसे पाप-पुण्य की बात सोचनी चाहिए ? उस दिन मेरी मूर्ख पत्नी ने प्रताप पर किए मेरे प्रहार को अपने ऊपर झेल लिया लेकिन आज उसकी कोई रक्षा न कर सकेगा। प्रताप जहाँ भी होगा मैं वहीं पहुँचूँगा। चाहे सहस्रों मेवाड़ी योद्धा उसके रक्षा-कवच बने हुए हों वे मुझे रोक नहीं सकेंगे। जिस प्रकार प्रताप महाराजा मानसिंह और शाहज़ादा सलीम से दो हाथ करने को उन्मत्त हो रहे हैं उसी प्रकार मैं प्रताप के रक्त का प्यासा हो उठा हूँ। जो हृदय के कोने में थोड़ा संकोच शेष था वह भी अब समाप्त हो गया है।

(शक्तिसिंह क्षिप्रता से प्रस्थान करने लगता है। किन्तु इंदु पथ रोकती है।)

इंदु : ठहरिए, यह क्या कर रहे हैं आप। प्रताप को तो आप पा न सकेंगे। व्यर्थ ही आपको अपने प्राणों से हाथ धोने पड़ेंगे।

(सहसा मानसिंह का प्रवेश)

मानसिंह : शक्तिसिंहजी, अब प्रताप को आप सचमुच नहीं पा सकेंगे।

शक्तिसिंह : क्या कहा, नहीं पा सकूँगा! क्यों नहीं पा सकूँगा? वह धरती के किसी ओर पर हो मैं उसे प्राप्त करूँगा। मेरा पथ न पर्वत रोक सकते हैं, न समुद्र।

मानसिंह : किन्तु वह धरती पर हो तब तो आप उसे प्राप्त कर पावें।

इंदु : क्या कहा, वह धरती पर नहीं है? क्या वह···

मानसिंह : हाँ वीरगति पा गए।

इंदु : नहीं, नहीं, असंभव। भारत-भाग्याकाश का सूर्य इस प्रकार सहसा अस्त नहीं हो सकता। मेवाड़ी सेना को विचलित करने के लिए यह प्रवाद फैलाया गया है। यह मुगलों का प्रपंच है। सम्मुख युद्ध में मेवाड़ी योद्धाओं से पार न पाकर अब छल-बल से आप युद्ध जीतना चाहते हैं।

मानसिंह : मान लो, एक क्षण के लिए तुम ठीक कहते हो कि मुगलों ने मेवाड़ी योद्धाओं को हताश करने के लिए ही यह प्रवाद फैलाया है तो इसमें हानि क्या है? छल भी युद्ध का ही अंग है, सैनिक! किन्तु, यह बात सत्य है कि एक व्यक्ति-पहाड़ के समान सुदृढ़ शरीरवाला, जिसकी बाहुओं में विद्युत के समान फुर्ती थी, जिसकी आँखें शंकर के तीसरे नेत्र के समान थीं और जिसके विशाल मस्तक पर मेवाड़

का राजमुकुट शोभित था वह अभी-अभी हमारी सेना में कटकर गिरा है।

(इंदु की आँखों में अश्रु छलछला आते हैं। शक्तिसिंह अपना मस्तक पकड़कर पृथ्वी पर बैठ जाता है।)

मानसिंह : यह क्या हो रहा है तुम लोगों को ? (सैनिक के रूप में इंदु से) तुम हमारी सेना के साधारण सैनिक हो। प्रताप की मृत्यु के समाचार से तुम्हारी आँखों में आँसू किसलिए ? और शक्तिसिंह तुम—तुम किस लिए विचलित हो उठे ?

(शक्तिसिंह कोई उत्तर न देकर खड़ा होता है और अपनी तलवार के स्वयं ही दो टुकड़े कर देता है।)

मानसिंह : (हँसता हुआ) हः हः हः, अपना क्रोध तलवार पर उतार रहे हो ? वीरवर शक्तिसिंह, तुम्हें प्रसन्न होना चाहिए। मेरा अनुचर आ ही रहा होगा, वह छंगी जो महाराणा प्रताप के मस्तक पर शोभित थी उसे लेकर। वह अब तुम्हारे मस्तक पर शोभित होगी।

इंदु : नहीं, नहीं, यह कभी नहीं होगा। मेवाड़ में एक भी व्यक्ति जीवित है तब तक किसी देशद्रोही को मेवाड़ का राजमुकुट धारण नहीं करने दिया जावेगा। मैं यह नहीं मानता कि अब महाराणा इस संसार में नहीं हैं, फिर भी मान लो कि उन्होंने वीर-गति प्राप्त की फिर भी मेवाड़ के लिए—बल्कि सारे भारत के लिए उनका अस्तित्व समाप्त नहीं हुआ। वह जीवित रहेंगे–अमर रहेंगे, स्वाधीनता के लिए प्राण देने वालों को प्रेरणा देते रहेंगे।

मानसिंह : सैनिक, जानते हो, तुम्हारे इन शब्दों से क्या प्रमाणित होता है ? तुम मेवाड़ी हो और जान-बूझकर छलपूर्वक हमारी सेना में भर्ती हुए हो ताकि अवसर पाकर हमें हानि पहुँचाओ। मैं तुम्हें बंदी बनाऊँगा।

(इंदु म्यान से तलवार निकालती है।)

इंदु : सावधान, मानसिंह, तुम राजा हो, सम्राट् के श्रेष्ठतम सेनापति हो, लेकिन तुम में मुझे बंदी बनाने की शक्ति नहीं है। मैं तुम दोनों से युद्ध कर सकता हूँ और दोनों को यमलोक पहुँचा सकता हूँ। साहस हो तो निकालो अपनी तलवार। (शक्तिसिंह से) आप भी लेकिन आपने तो अपनी तलवार ही तोड़कर फेंक दी— फिर भी मुग़ल सैनिक शिविर में तलवार की क्या कमी है—ले आओ दूसरी तलवार।

शक्तिसिंह : शक्तिसिंह गीदड़ों, रीछों और भेड़ियों पर तलवार नहीं उठाता। वह केवल सिंह का शिकार करता है। संसार में केवल एक व्यक्ति था जिस पर शक्तिसिंह तलवार उठाने में प्रसन्न होता। वह था प्रताप किन्तु उसने मुझे इस सौभाग्य से वंचित कर दिया। मैं नहीं सोचता था कि यह युद्ध उनके प्राण ले लेगा और शक्तिसिंह की मनोकामना पूर्ण नहीं होगी। अंत में प्रताप की ही विजय हुई।

इंदु : (मानसिंह से) यह तो पागल हो गए हैं। और सच बात तो यह है कि यह सदा से ही पागल रहे हैं।

मानसिंह : तुम यह कैसे जानते हो ?

इंदु : इसलिए कि जैसा कि आपने अनुमान लगाया मैं

मेवाड़ी हूँ। मेवाड़ के राजमहल से मेरा संबंध रहा है—और कुछ नहीं चाकरी का। इस पागल व्यक्ति को पास से देखने का अवसर मुझे मिला है—लेकिन जाने दो इस बात को। मैं आपको चुनौती देता हूँ कि आपमें साहस हो तो मुझे बंदी बना लें या मुझे जाने दें।

मानसिंह : सैनिक, तुम्हारे जन्मभूमि के प्रति प्रेम और साहस से मैं प्रसन्न हुआ।

इंदु : किन्तु महाराजा आपकी भी कोई जन्मभूमि है—उसके प्रति आपका...

मानसिंह : सैनिक, अब यह सब सोचने का अवसर समाप्त हो गया है। मेरी जन्मभूमि पराधीन है—लेकिन नाम-मात्र के लिए। देश का सर्वनाश कराने की अपेक्षा उसे सुखी और शांत रखना ही मैंने ठीक समझा। मैं नहीं जानता मैंने भूल की या उचित किया किन्तु अब रास्ता बदलना मेरे वश में नहीं है। तुम को मैं स्वतंत्र करता हूँ। तुम अपने ठीक स्थान पर जा सकते हो।

इंदु : धन्यवाद।

(इंदु जाने लगती है इतने में ही एक मुग़ल सैनिक महाराणा प्रताप का राजमुकुट लेकर प्रवेश करता है। इंदु झपट कर उसके हाथ से राजमुकुट छीन लेती है।)

इंदु : मेवाड़ का पवित्र राजमुकुट शत्रु के हाथों से अपवित्र हो इसे कोई मेवाड़ी नहीं सह सकता।

(इंदु क्षिप्रता से प्रस्थान करती है। मुग़ल सैनिक उसका रास्ता रोकने बढ़ता है। शक्तिसिंह मुगल सैनिक के आगे खड़ा हो जाता है और उसके हाथ से तलवार छीनकर उसी पर तानता है।)

शक्तिसिंह : सावधान, जो तुमने एक कदम भी आगे रखा तो तुम्हारा मस्तक पृथ्वी पर लोटने लगेगा।

मानसिंह : हः हः। शक्तिसिंह ? तुम विचित्र व्यक्ति हो। सम्भवतः सभी मेवाड़ी पागल हैं। अरे भाई, यह राजमुकुट तो इसलिए लाया गया है कि इसे आपके शीश पर रखा जावे। अब आप स्वयं ही उसे मेवाड़ वापस भेज देना चाहते हैं।

शक्तिसिंह : मुझे राजमुकुट के साथ मेवाड़ भी चाहिए। राज-मुकुट चाहे न मिले लेकिन मेरा मेवाड़ तो मुझे मिलना चाहिए। आप कहेंगे कि सम्राट् अकबर मुझे मेवाड़ भी देंगे किन्तु तब भी मेवाड़ मुझे नहीं मिलेगा। मेवाड़ मुझे बुलाकर मेरे मस्तक पर राजमुकुट रखेगा तो मैं उसे स्वीकार करूँगा—तुम्हारे या सम्राट् अकबर के हाथ से नहीं।

मानसिंह : तब किसलिए तुमने मेवाड़ की भूमि को अपने सहस्रों स्वजनों के रक्त से सिंचित कराया ?

शक्तिसिंह : इसलिए कि मुझे मेवाड़ से प्रेम है। मेवाड़ ने मुझसे प्रेम नहीं किया।

मानसिंह : मेवाड़ का प्रेम जीतने के लिए तुम उसके मस्तक पर तलवार तानकर आए थे।

शक्तिसिंह : और सम्राट् अकबर भी तो तुम्हारा प्रेम जीतने के

लिए तलवार तानकर आए थे! किन्तु अंबर और मेवाड़ में अंतर है महाराजा मानसिंह। अंबर ने तलवार का उत्तर शहनाई की सुहानी ध्वनियों से दिया और मेवाड़ ने रण-वाद्यों के गर्जन से।

मानसिंह : परिणाम !

शक्तिसिंह : परिणाम की चिंता कायर करते हैं। वीर पुरुष नहीं। इसके उदाहरण सम्राट् अकबर के प्रपिता बाबरशाह थे। उन्होंने जब भारत पर आक्रमण किया था तब क्या उन्होंने परिणाम का हिसाब लगाया था। उनके सम्मुख लोधी बादशाह की एक लाख सेना थी और बाबर के पास इसकी चौथाई भी नहीं किन्तु विजयश्री ने उनको ही वरमाला पहनाई।

मानसिंह : किन्तु मेवाड़ ने तो अपने महाराणा को भी खो दिया और राजमुकुट भी! वह राजमुकुट आज मेरी कृपा से ही वापस मेवाड़ में जा रहा है।

शक्तिसिंह : मेवाड न तो महाराणा के लिए युद्ध करता है, न राजमुकुट के लिए, मानसिंह जी। वह तो संग्राम करता है देश के सम्मान के लिए।

मानसिंह : आज मैं किसी दूसरे ही शक्तिसिंह के दर्शन कर रहा हूँ। वह सैनिक ठीक ही कहता था कि यह व्यक्ति सदा से ही पागल रहा है। तुम्हें समझना बहुत कठिन है। तुम्हें सम्राट् के समीप ले जाने में सम्भवतः मुझसे भूल हुई है।

शक्तिसिंह : तुमसे कुछ भी भूल नहीं हुई, महाराजा। तुमने मुझ में भी अपने ही दर्शन किए। मुझ में प्रताप को तुमने नहीं देखा।

मानसिंह : प्रताप बनने में तुम गौरव अनुभव करते हो, शक्तिसिंह !

शक्तिसिंह : प्रताप बनने में तो सम्राट् अकबर भी गौरव अनुभव करेंगे। लक्ष्मी और शक्ति ये दोनों देवियाँ चंचला हैं, महाराजा ! सम्राट् बाबर कितनी बार सिंहासन के स्वामी बने कितनी बार राह-राह उन्हें भटकना पड़ा। लेकिन क्या कभी उन्होंने मस्तक झुकाया ? इसी प्रकार मेवाड़ कितनी बार विध्वंस की ज्वाला में भस्म हुआ और कितनी बार पुनर्जीवित हुआ। किंतु उसने अपने यश को आँच न आने दी। सभी वीर पुरुषों का मार्ग एक ही प्रकार का होता है।

(एक अन्य मुगल सैनिक का प्रवेश और मानसिंह का अभिवादन करना।)

मानसिंह : क्या समाचार लाए हो ?

सैनिक : शाहज़ादा हुजूर ने आपको याद किया। युद्ध-भूमि में जिस व्यक्ति की मृत्यु हुई थी जिसे हम लोगों ने महाराणा प्रताप समझा था वह वास्तव में कोई अन्य ही है ?

शक्तिसिंह : लेकिन राजमुकुट ?

सैनिक : राजमुकुट तो उनका ही था। उनके किसी सामंत ने महाराणा को सङ्कट से बचाने के लिए पहन लिया था ताकि हम सबका ध्यान उसकी तरफ़ चला जावे और महाराणा बच जावें।

शक्तिसिंह : धन्य है वह सामंत जिसने देश का मान रखने के लिए निश्चित मृत्यु को आमंत्रित किया।

मानसिंह : तो महाराणा अभी जीवित हैं ?

सैनिक : जी हाँ, महाराजा। उनका स्वामिभक्त घोड़ा उन्हें रणभूमि से दूर उड़ा ले गया।

शक्तिसिंह : तो अभी वह जीवित हैं। तो अब भी मेरे लिए अवसर है। मैं जाता हूँ।

(शीघ्रता से शक्तिसिंह का प्रस्थान।)

मानसिंह : हः हः हः। यह भी विचित्र व्यक्ति है। अभी मेवाड़ की गौरव-गाथा का गान कर रहा था और अब सम्भवतः प्रताप के प्राण लेने को चल पड़ा है। शक्तिसिंह का कौन-सा रूप अंत में स्थिर रहता है यह देखना है। (दोनों सैनिकों से) तुम लोग जाओ। मैं अभी शाहज़ादा हुज़ूर के पास जाता हूँ।

(सब का प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

———

दूसरा दृश्य

[स्थान—रणभूमि में मेवाड़ी सेना शिविर के पास एक एकांत स्थान। सन्ध्या से कुछ पूर्व। दीवान भामाशाह सैनिक वेशभूषा में सज्जित उद्विग्न मनस्थिति में इधर से उधर और उधर से इधर घूम रहे हैं। सहसा इंदु प्रवेश करती है। उसकी वेशभूषा गत दृश्य की ही है। उसके एक हाथ में नंगी तलवार है और एक में महाराणा प्रताप का राजमुकुट जिसे उसने एक कपड़े से ढंक रखा है।]

इंदु : मेवाड़ के परमादरणीय दीवान भामाशाह के चरणों में मैं नमस्कार करता हूँ।

(भामाशाह विचारों में डूबा हुआ होने के कारण इंदु के आगमन पर ध्यान दे नहीं सका था। उसके बोलने पर यह साहसा चौंक उठता है।)

भामाशाह : कौन !

(भामाशाह अपनी तलवार म्यान से निकालता है।)

इंदु : मेवाड़ नमस्कार का उत्तर तलवार से देता है! क्या यही परंपरा है मेवाड़ की ?

भामाशाह : अनेक नमस्कार तलवार से भी तीखे होते हैं, सैनिक उनका उत्तर तलवार भी ठीक तरह नहीं दे पाती। शत्रु का नमस्कार सम्मान प्रदर्शित करने के लिए नहीं अपितु विरोधी को अपमानित करने के लिए होता है।

इंदु : किंतु दीवानजी, मैं शत्रु हूँ यह धारणा आपने कैसे वना ली !

भामाशाह : तुम्हारी वेशभूषा से। मेवाड़ी, योद्धाओं और मुगलों के पक्ष में लड़ने वाले राजपूत सैनिकों की पोशाक में अंतर है।

इंदु : उसका अर्थ हुआ कि आप मुझे भली-भाँति देख नहीं पाए—पहचानते तो बाद में। जब महाराणा के अनुज भी मुझे न पहचान पाए तो आप कैसे पहचानते ?

भामाशाह : महाराणा के अनुज !

इंदु : वही जो आज अपने ही देश के विरुद्ध संग्राम करने आए हैं।

भामाशाह : अर्थात् शक्तिसिंह !

इंदु : वही। वह मुझे पहचानें चाहे न पहचानें लेकिन उनका एक संदेश उन्होंने मेवाड़ को मेरे द्वारा भेजा है।

भामाशाह : सन्देश ?

(इंदु राजमुकुट पर से कपड़ा हाटाती है।)

इंदु : इस राजमुकुट को धारण करने वाला अपने कर्त्तव्य का पालन करता हुआ वीर-गति को प्राप्त हो चुका है और मेवाड़ की परंपरा के अनुसार मेवाड़ की राजगद्दी एक क्षण के लिए भी रिक्त नहीं रहनी चाहिए। तुरन्त ही महाराणा के स्थान पर उनसे छोटे भाई के मस्तक पर यह राजमुकुट शोभित होना चाहिए।

भामाशाह : सैनिक, मुझे खेद है कि शक्तिसिंह अपने मस्तक पर मेवाड़ के राजमुकुट को धारण करें ऐसा दुर्दिन अभी नहीं आया । इस राजमुकुट का वास्तविक अधिकारी जीवित है ।

(इंदु का चेहरा प्रफुल्लित हो उठता है ।)

इंदु : (प्रसन्नता भरे स्वर में) सचमुच, क्या महाराणा जीवित हैं । कहाँ हैं ?

भामाशाह : यही तो ठीक से मुझे नहीं मालूम । उनकी खोज में मैंने सभी दिशाओं में लोगों को भेजा है ।

इंदु : (उदास होकर) तब आपको निराशा के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लगेगा । क्योंकि वह तो इस हल्दीघाटी को अपने शत्रुओं के रक्त से रँगते हुए स्वयं अपना भी मस्तक इसकी गोद में चढ़ाकर सदा के लिए सो गए अन्यथा यह राजमुकुट हमारे हाथ कैसे पड़ता ।

भामाशाह : सैनिक, तुम्हारी उम्र अभी कच्ची है और मेवाड़ को तुम नहीं जानते । यहाँ ऐसे भी सर्वस्व-त्यागी मृयुंजय जन्म लेते हैं जो स्वार्थवश नहीं केवल आत्माहुति देने के लिए अपने मस्तक पर राजमुकुट धारण करते हैं ।

इंदु : ऐसे उदाहरण देखने में कम आते हैं ।

भामाशाह : कम आते हैं लेकिन आते हैं । जब चित्तौड़ पर गुजरात के बादशाह बहादुरशाह ने आक्रमण किया था और जब महाराणा विक्रम दुर्ग छोड़कर चले

गए थे तथा महारानी कर्मवतीजी ने संग्राम के संचालन का भार अपने ऊपर लिया था उस समय सीसौदिया वंश के एक वृद्ध ने ऐसे ही अपूर्व त्याग का परिचय दिया था।

इंदु : आपका संकेत बाघसिंहजी से है।

भामाशाह : हाँ, जब लंबे और भयानक संग्राम के पश्चात दुर्ग की रक्षा की आशा समाप्त हो गई तो दुर्ग-स्थित महिलाओं ने अपने सम्मान की रक्षा करने के लिए जौहर करने का निश्चय किया और पुरुषों ने वीर-व्रत का अर्थात् केसरिया बाना पहनकर दुर्ग से निकलकर शत्रुओं का संहार करते हुए मृत्यु का आलिंगन करने का। परंपरा के अनुसार महाराणा को इस व्रत का नेतृत्व करना चाहिए तब बाघसिंहजी ने कहा—ऐसा स्वर्णावसर सौभाग्य से ही प्राप्त होता है जब मनुष्य मरकर अपने आपको अमर कर जावे। आज मैं महाराणा बनूँगा मस्तक पर छंगी धारण करूँगा और वीर-व्रत के लिए प्रस्थान करनेवाले में सबसे आगे रहूँगा।

इंदु : निश्चय ही बाघसिंहजी अपना नाम अमर कर गए हैं।

भामाशाह : और उनसे भी अधिक महानता और अद्भुत शौर्य का परिचय दिया झाला सामंत मन्नाजी ने। आज का भयंकर युद्ध तुमने भी देखा होगा, सैनिक !

इंदु : नहीं, मैं तो महाराणा के देशद्रोही अनुज की छाया बना रहा और उन्होंने संग्राम में भाग ही नहीं लिया।

भामाशाह : आश्चर्य, यह बात तो शक्तिसिंह के स्वभाव के विपरीत है। उसकी भुजाएँ तो युद्ध करने के लिए फड़कती रहती हैं। खैर, मैं तुमसे कह रहा था मन्नाजी की बात। मेवाड़ के योद्धा तुम्हारी सेना की अपेक्षा संख्या में बहुत कम थे किंतु उत्साह में नहीं। वे अपनी मातृभूमि के मान के लिए लड़ रहे थे तुम्हारी तरह वेतनभोगी सैनिक नहीं थे।

इंदु : आप मेरा अपमान कर रहे हैं। जानते हो राजपूत अपमान नहीं सह सकता।

भामाशाह : वास्तविक सम्मान किसे कहते हैं इसका ज्ञान न शक्तिसिंह में था, न तुममें है, न अंबर-नरेश मानसिंह में है, नहीं तो इस युद्ध में तुम सबकी तलवारें मेवाड़ की ढाल बनतीं। जाने दो इस बात को। मेवाड़ विपरीत परिस्थितियों में साहस नहीं छोड़ता। हमारे योद्धा शत्रु-सेना का संहार करते हुए वीर-गति को प्राप्त हो रहे थे। महाराणा सबसे आगे थे—उनकी आँखें खोज रही थीं मानसिंह को—किंतु पता नहीं वह कहाँ छिपा था। तभी महाराणा की निगाह हाथी पर आसीन शाहजादा सलीम पर पड़ी।

इंदु : और संभवतः वह उसकी तरफ बढ़े।

भामाशाह : हाँ, सलीम की रक्षा का पूरा प्रबंध था। फिर भी सैकड़ों मुगल-सैनिकों को मौत के घाट उतारते हुए वह सलीम के निकट पहुँच ही गए।

इंदु : बिना अपने प्राणों की चिंता किए।

भामाशाह : अपने प्राणों की महाराणा को चिंता होती तो वह शक्तिशाली सम्राट् अकवर को चुनौती ही क्यों देते ? महाराणा को चेतक घोड़े पर सवार अपने सामने देख सलीम ने उन पर वार किया किंतु महाराणा उसे बचा गए तथा सलीम पर भाले से प्रहार किया। सलीम का भाग्य अच्छा था—भाला लोहे की मोटी चद्दर से टकराया और उसे छेद डाला किंतु सलीम बच गया। तव महाराणा ने तलवार से वार किया—किंतु सलीम का हाथी पीछे हट गया और तलवार का वार महावत पर पड़ा। वह बेचारा मारा गया। हाथी सलीम को लेकर भाग खड़ा हुआ।

इंदु : मुगल राजवंश का कुल-दीपक बुझते-बुझते बच गया।

भामाशाह : महाराणा अपनी सेना से दूर निकल गए थे। वह राजमुकुट पहने हुए थे इसलिए मुग़ल सैनिक उन्हें पहचान कर उन्हें लक्ष्य कर बाण-वर्षा करने लगे। यह दृश्य मन्नाजी ने देखा। मन में सोचा यदि इस समय महाराणा की रक्षा न की तो मेवाड़ राजवंश का सूर्य सदा के लिए अस्त हो जावेगा। साथ ही स्वाधीनता के लिए मेवाड़ ने जो संग्राम प्रारंभ किया है उसकी भी अकाल मृत्यु हो जावेगी। यही समय है जब अपने प्राणों की आहुति देकर मेवाड़ को दुर्दिन से बचाया जावे। वह आगे बढ़े। महाराणा के राजमुकुट को अपने मस्तक पर धारण किया और तव मुग़ल सैनिकों ने उन्हें ही महाराणा समझकर

घेर लिया। उन्होंने भयंकर नर-संहार किया किंतु अंत में यह वीर-गति को प्राप्त हुए।

इंदु : और महाराणा का क्या हुआ ?

भामाशाह : यही तो अभी तक ज्ञात नहीं हो पाया। उनका स्वामिभक्त घोड़ा मनुष्य से भी अधिक बुद्धिमान है। वह उन्हें रणभूमि से कहीं दूर ले गया। कहाँ ले गया इसकी खोज की जा रही है। वह युद्ध करते हुए क्षत-विक्षत हो गए थे।

इंदु : तब तो उनको तुरंत खोज निकालना चाहिए। आप यहाँ खड़े क्या कर रहे हैं ? आइए मेरे साथ। मेवाड़ के सूर्य को हम डूबने नहीं देंगे।

भामाशाह : लेकिन तुम शत्रु-पक्ष···

इंदु : इसका उत्तर समय आने पर प्राप्त हो जावेगा। बातों में समय नष्ट करने से अनर्थ हो जावेगा। आइए।

(दोनों का प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

———

तीसरा दृश्य

(स्थान—हल्दीघाटी के निकट एक वन में खुला स्थान। समय—संध्या। महाराणा प्रताप रक्त-सिंचित वस्त्रों में क्षत-विक्षत स्थिति में एकाकी बैठे हैं। उन्होंने अपना मस्तक अपने दोनों घुटनों पर रख छोड़ा है। इसी समय शक्तिसिंह प्रवेश करता है।)

शक्तिसिंह : ओ मेवाड़ के महाराणा।

प्रताप : (सिर उठाकर शक्तिसिंह को देखते हुए) तो तुम आ गए, शक्तिसिंह मुझसे प्रतिशोध लेने ? उठाओ अपनी तलवार, काट डालो मेरा मस्तक। काट डालो यह मस्तक जो पराजय के कलंक से अपवित्र हो चुका है।

शक्तिसिंह : शक्तिसिंह, कसाई नहीं योद्धा है। आप में इस समय शस्त्र पकड़ने की शक्ति होती तो कदाचित् आज भी मैं आपको द्वंद-युद्ध की चुनौती देता किंतु आज परिस्थिति भिन्न है।

प्रताप : हाँ, परिस्थिति भिन्न है। आज मेवाड़ भी घायल है और प्रताप भी। उस दिन मेवाड़ के नवनिर्वाचित महाराणा ने तुम्हें मेवाड़ से निर्वासित किया था और आज तुमने विदेशियों के सहयोग से मेवाड़ के हृदय को बेध डाला है। मेवाड़ के वक्षस्थल पर तुमने हिंसा का पैशाचिक नृत्य किया है और अब पराजित, आहत और व्यथित प्रताप का उपहास

करने आए हो। आज तुम्हारे आनन्द की कोई सीमा नहीं है—तुम अट्टहास क्यों नहीं करते ! अपने अट्टहास से दिशाओं को गुँजा दो।

शक्तिसिंह : दादाभाई।

प्रताप : (उठ कर खड़े होते हुए) चुप रहो, शक्तिसिंह ! इस पवित्र सम्बन्ध को उच्चारित कर भाई के नाते को कलंकित न करो। भूल जाओ कि प्रताप तुम्हारा भाई है—भूल जाओ कि मेवाड़ में तुम्हारा कोई सम्बन्ध है, भूल जाओ कि मेवाड़ की धूल में खेलकर, यहाँ का अन्न-जल खाकर, तुम इतने बड़े हुए हो, तुमने दैत्य के समान शक्ति पाई है एक मेवाड़ी माँ का दूध पीकर। आज तो तुम अकबर के हो—कुछ दिन तुमने उसका नमक खाया है इसलिए मेवाड़ को पद-मर्दित करना तुम्हारा कर्तव्य है। दया न करो इस मूर्ख विद्रोही पर जो भारत-सम्राट् होने का दावा करने वाले अकबर के आगे मस्तक झुकाने को तैयार नहीं है। काटते क्यों नहीं हो मेरा मस्तक ? तुम मेरा बध नहीं करना चाहते ? तब किसलिए आए हो यहाँ ?

शक्तिसिंह : आपकी रक्षा करने के लिए।

प्रताप : मेरी रक्षा करने के लिए ? आश्चर्य, विषधर भी अमृत उगलने का दावा करता है।

शक्तिसिंह : अमृत और विष सहोदर हैं—एक ही कोख से जन्मे हैं—सिंधु की कोख से। विष देने वाला अमृत भी दे सकता है। मुझे जैसे ही ज्ञात हुआ कि आपको

अधिक घायल जानकर स्वाभिभक्त चेतक रणभूमि से ले उड़ा है वैसे ही मैं आपकी खोज में चल पड़ा।

प्रताप : खोज में चल पड़े, प्रतिशोध लेने ? तुमसे तो अच्छा था मेरे भाई के समान मेरा अश्व चेतक। वह भी घायल था फिर भी उसने अपने घावों की चिंता नहीं की और भागता ही रहा जब तक उसकी साँसों ने साथ दिया। आज वह बेचारा—उधर देखो, वृक्ष के नीचे मृत पड़ा है। मुझे अपनी पराजय का इतना दुःख नहीं जितना चेतक की मृत्यु का।

शक्तिसिंह : चेतक की मृत्यु का दुःख तो मुझे भी है।

प्रताप : लेकिन आज प्रताप के प्राणों का अंत हो जाता तो तुम्हें दुःख न होता।

शक्तिसिंह : ऐसा न कहो, दादाभाई! आपके प्राणों की चिंता ही तो मुझे यहाँ खींच लाई है। जब मैंने देखा कि दो मुग़ल अश्वारोही आपका पीछा कर रहे हैं तो मुझसे रहा नहीं गया। मैं भी अश्व पर सवार हो उनके पीछे लग गया और दोनों को मृत्यु के घाट उतार कर आपके सामने उपस्थित हो गया हूँ।

प्रताप : क्योंकि तुम चाहते थे कि तुम्हारा शिकार दूसरे के हाथ न लगे।

(शक्तिसिंह की आँखों में आँसू आ जाते हैं।)

प्रताप : भैया, तुम रो रहे हो ? वीर पुरुष रोता नहीं है। अपने प्रियतम व्यक्ति की मृत्यु पर भी उसकी आँखों में अश्रु नहीं छलकते। वीर पुरुष के वक्ष में हृदय के स्थान पर लोह-खंड होता है।

शक्तिसिंह : कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जो वज्र-हृदय को भी द्रवित कर देती हैं। पांडवों पर कौरवों ने निरंतर अमानुषिक अत्याचार किए थे तब भी कुरुक्षेत्र की समरभूमि में जब अर्जुन ने अपने गुरुजनों और स्वजनों को विपक्ष में युद्ध के लिए आते देखा तो वह ममता से अभिभूत हो गया था।

प्रताप : किन्तु कौरवों के हृदय में तो इस प्रकार की ममता-मोह का उदय नहीं हुआ। कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जिनकी कोमल भावनाएँ मर जाती हैं।

शक्तिसिंह : मरती नहीं है, दादाभाई, सुप्त हो जाती हैं। वे समय के उपचार से नव चेतना भी पा सकती हैं। आपका वह शक्तिसिंह मर गया जिसने एक दिन आप पर तलवार उठाई थी। मेरा अहं ही आपका शत्रु था और वास्तव में देखा जावे तो आपका नहीं मेरा शत्रु था। उसने मुझे मार डाला था। दादाभाई आपने मुझे जीवित किया है।

प्रताप : मैंने ? तुम क्या कह रहे हो ? मैंने तो तुम पर दया भी नहीं की और यदि मैं इस समय तलवार चलाने की क्षमता रखता तो संभवतः तुम्हारा मस्तक काटने में संकोच नहीं करता।

शक्तिसिंह : क्योंकि आपने शक्तिसिंह के दो ही रूप देखे हैं—एक वह जिसने आप पर तलवार का प्रहार किया था और एक वह जिसने मेवाड़ पर प्रहार किया है किन्तु शक्तिसिंह के हृदय के किसी कोने में मनुष्य भी जी रहा था इसे कदाचित् आप नहीं जानते और मैं

भी नहीं जानता था किन्तु जब आपको अपने प्राणों की चिंता न करते हुए अपने देश का मान रखने के लिए महाकाल का अवतार बने शत्रु-दल का संहार करते देखा तो मेरा मस्तक आपके चरणों में अनायास ही झुक गया। मैंने सोचा इसी मेवाड़ में तो मैंने भी जन्म लिया है, मैं महाराणा बनने की तो साध रखता हूँ लेकिन जन्मभूमि को विदेशियों के हाथों पद-मर्दित होते देख मैं निश्चित खड़ा हूँ—बल्कि शत्रु का दाहिना हाथ बना हुआ हूँ। क्या यही मेरी मनुष्यता है? उसके बाद जब ज्ञात हुआ कि झाला मन्नाजी ने राजमुकुट अपने मस्तक पर रख कर शत्रु का ध्यान आपकी ओर से हटाकर अपनी तरफ़ कर लिया और उन्होंने संग्राम करते हुए वीरगति पाई तब मेरी आत्मा पुकार उठी—हाय, उनकी जगह में क्यों नहीं हुआ? मेरे मस्तक पर तो देश-द्रोह के अमिट कलंक का टीका लगना था सो लग गया। इस मस्तक को मैं ऊपर उठाकर कैसे चल सकूँगा?

प्रताप : अनेक देश-द्रोही ऊँचा मस्तक कर चलते हैं। उस दिन मानसिंह ऊँचा मस्तक किए ही हमारे पास आए थे—और मेवाड़ की बची-खुची स्वाधीनता का नाश करने की धमकी देकर ऊँचा मस्तक किए हुए चले भी गए।

शक्तिसिंह : उनकी वह जानें और भगवान् जानता होगा। मैं तो अपनी बात जानता हूँ। मैं तो अब किसी से आँखें भी नहीं मिला सकता। पश्चाताप की ज्वाला

में जीवन भर जलते रह कर जीवित रहना मुझे स्वीकार नहीं है। दादाभाई, यह लो मेरी तलवार इतनी शक्ति तो आपके हाथों में है कि प्रतिरोध न करने वाले का मस्तक काट सकें।

(शक्तिसिंह अपनी तलवार प्रताप के चरणों में रखता है और अपना मस्तक झुकाता है। प्रताप शक्तिसिंह को उठा कर गले लगा लेता है। दोनों की आँखों में आँसू आ जाते हैं। इंदु और भामाशाह का प्रवेश। इंदु इस समय भी पिछले दृश्य के समान वेश में है।)

इंदु : धन्य है आज की संध्या जो मेवाड़ के आकाश को ही नहीं अवनि को भी रक्तवर्ण कर दोनों का मिलन करा रही है।

भामाशाह : बंधु-विग्रह ही भारत का सबसे बड़ा अभिशाप है और बंधु-मिलन ही वह वरदान है जिससे भारत विश्व-विजयी बन सकता है।

(शक्तिसिंह इंदु को देखता है।)

शक्तिसिंह : तुम यहाँ ?

इंदु : और नहीं तो मेरे लिए अन्य स्थान कहाँ है ? मेवाड़ से आपका अटूट संबंध है—आपको जाना पड़ा था—लेकिन आप लौट आए। मेरा भी आपसे अटूट संबंध है किंतु समय ने हमें विलग कर दिया था किंतु आज फिर मिलाया है।

(इंदु अपनी नकली दाढ़ी-मूँछें निकालती है।)

शक्तिसिंह : (साश्चर्य) अरे इंदु !

इंदु : आपके चरणों की रज पाने के लिए ही तो मुझे यह नाटक करना पड़ा।

(इंदु शक्तिसिंह के चरण छूती है।)

(पटाक्षेप)

———